वचनसिद्ध अवधूत श्री भानीनाथजी



❖ प्रकाशकः
श्रीमती पुष्पा बीदावत
बीदावत भवन
शेखसरिया कुआं के पास
चूरू - ३३१००१
दूरभाष - ५०१६७

❖ प्रथम संस्करण - १५ जुलाई, १९९९ ई०

❖ पुस्तक प्राप्ति स्थानः
बीदावत भवन
शेखसरिया कुआं के पास
चूरू - ३३१००१

❖ मुद्रकः
एस० के० प्रिन्टर्स, चूरू
दूरभाष - ५००७७

# समर्पण

प्रेरक एवं पथ-प्रदर्शक

श्रद्धेय गोविन्दजी अग्रवाल

को सादर

# अनुक्रम

# चित्रादि-सूची

# दो-शब्द

महात्मा ईसामसीह के जन्म से भी पहले योग-सूत्र (पातञ्जल-योग) के रचयिता महर्षि पतञ्जलि ने गहन आत्म-चिन्तन व आत्मानुभूति के फलस्वरूप यह निष्कर्ष निकाला था कि सारे अनर्थों की जड़ चंचल-चित्त की दुष्प्रवृत्तियाँ हैं। इसलिए उन्होंने इन पर अंकुश लगाने के लिए 'चित्त-वृत्ति निरोध' पर ही सर्वाधिक बल दिया था। महायोगी गुरु गोरक्षनाथ ने भी चंचल-चित्तवृत्तियों पर नियंत्रण बनाये रखने के लिए 'चित्त-वृत्ति निरोध' को ही अनिवार्य मानते हुए इसके लिए करणीय क्रियाएँ भी बतलाई थीं।

महासागर में निरन्तर उठने वाली उत्ताल तरंगों की तरह ही मन में उठने वाली ज़बरदस्त महत्त्वाकांक्षी तरंगों का भी कहीं कोई अन्त नहीं, जिनके पीछे दौड़ता-दौड़ता ही आदमी दम तोड़ देता है।

राज्य-सत्ता प्राप्त कोई व्यक्ति भले ही शहनशाह कहलाता हो, चारों ओर उसका जय-जयकार होता हो, किन्तु यदि वह इच्छाओ का दास है तो वह शहनशाह कहलाकर भी निरा भिखमंगा ही है। लेकिन जो इच्छाओं का दास नहीं, अभावों से घिरे रहकर भी जिसकी कोई चाह नहीं, कोई प्रलोभन जिसे लुभा नहीं सकता, वही असली शहनशाह है। किसी चिंतनशील शायर ने कितना सटीक कहा है-

हम खुदा थे ग़र न होता दिल में कोई मुद्दआ।
आरज़ुओं ने हमारी हम को बंदा कर दिया।।

परन्तु आज तो आदमी ने अपनी अन्तहीन इच्छाओं को खुली छूट देकर मन को घुड़-दौड़ का मैदान ही बना डाला है, जिसमें बे-लगाम घोड़े आठों-पहर एक-दूसरे से बाज़ी मार लेजाने की होड़ में सरपट दौड़ लगाते रहते हैं।

सुरा, सुन्दरी, सत्ता व सम्पत्ति, ये चार ही आज के आदमी के आराध्य बन गये हैं और इनकी आत्यंतिक चाह ने उसे इतना मूढ़ और मदान्ध बना दिया है कि इनकी प्राप्ति के लिए वह जघन्य से जघन्य दुष्कर्म करने में भी नहीं हिचकता। लेकिन यह सब प्राप्त कर लेने के बाद भी इच्छाओं का तो कोई अन्त नहीं होता। इच्छाओं पर काबू पाने का एकमात्र उपाय तो मनीषियों ने 'चित्त-वृत्ति निरोध' को ही बतलाया है। श्री भानीनाथजी महाराज ने गोरक्ष के इस सूत्र को पकड़ लिया था और उन्होंने जीवन की आवश्यकताओं को मात्र 'दो रोटी--दो लंगोटी' तक सीमित कर लिया था, जिसमें ही वे सहज संतुष्ट और सुखी थे।



गोरक्षनाथ ने ब्रह्मचर्य पर अत्यधिक बल दिया था। नारी-जाति के प्रति उनके मन में गहरा सम्मान और मातृभाव था। भानीनाथजी की भी नारी के प्रति पूरी पवित्र भावना रही। लेकिन आज तो यौनवाद की बढ़ती विभीषिका ने एक भयंकर सामाजिक-त्रासदी का रूप ले लिया है। नारी की अस्मत दाँव पर लगी है।

रामायण की कथा है कि कामान्ध रावण ने जब घात लगाकर निर्जन वन की कुटिया से सीता नाम की नारी का अपहरण किया तो निम्न-कोटि का पक्षी कहे जाने वाले गिद्ध को भी यह सह्य नहीं हुआ। उसने अपनी पूरी ताकत से अपहर्ता का विरोध किया एवं एक नारी को बचाने के संघर्ष में अपने प्राण विसर्जित कर दिये। परन्तु आज तो मनुष्यों से ठसा-ठस भरी बस्तियों से दिन-दहाड़े नारी अपहरण एवं सामूहिक-बलात्कार जैसी शर्मनाक घटनाएँ धड़ल्ले से हो रही हैं। सीता का अपहरण एक 'राक्षस' ने किया था। लेकिन आज की ये घिनौनी हरकतें तो उस 'आदमी' के द्वारा की जा रही हैं जिसे ईश्वर या प्रकृति की सर्वोत्कृष्ट रचना कहा जाता है। जय-जवान, जय- किसान और जय-विज्ञान के नारों के साथ 'जय-शैतान'

का नारा भी जोरों से गूज रहा है, जिसकी क्रियान्विति भी जोर-शोर के साथ ही हो रही है।

इन घटनाओं की जानकारियाँ मीडिया के माध्यम से देश को नित्य मिलती रहती हैं, लेकिन देश का नागरिक इन्हें समय की नियति मानकर अथवा रोज़मर्रा की सामान्य बात समझ कर एक ठण्डी और सीमित सी प्रतिक्रिया व्यक्त करके रह जाता है। यद्यपि इन दुराचारों को रोकने हेतु ढ़ेरों कानून बने हैं और विविध नामधारी महिला-संगठन भी स्थापित हैं, तथापि इन दुष्कर्मों की संख्या में कोई कमी आती नहीं लगती। मैं तो रात्रि को जब भी आकाश-गगा की ओर देखता हूँ तो मुझे हर-बार यही लगता है कि नारी का चीर तो आज भी खिंच ही रहा है।

गुलामी और सामन्तशाही के युग में तो नारी सदा अनाचार और यौन-शोषण की पीड़ा भोगती ही रही, परन्तु आज जब हम इक्कीसवीं शताब्दी में पाँव रखने जा रहे हैं, तब स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने वर्ष बीत जाने के बाद भी भारत जैसे सम्पूर्ण प्रभुता-सम्पन्न लोकतांत्रिक गणराज्य में (जिसे विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश कहलाने का गौरव भी प्राप्त है) यदि नारी अपने को असहाय और असुरक्षित महसूस करे तो यह लज्जा की ही बात है।

हो सकता है कि 'चित्त-वृत्ति निरोध' वाला पुराना 'गुरु-मंत्र' इस व्याधि का कोई कार-गर इलाज कर पाये। परन्तु आज के इस 'प्रगतिशील-युग' में तो ऐसी 'बोदी' बात मुँह से निकालना ही अपने को घोर रूढ़िवादी और परले सिरे का गावदी घोषित करना है।



पौराणिक कथा है कि आदि-युग में जब समुद्र-मंथन हुआ, तब उसमें से कालकूट विष भी निकला था, जिसे जन-कल्याणार्थ महादेव (शिव) ने पीलिया था, और इसी कारण वे नीलकण्ठ-महादेव कहलाये। तब से

लगाकर आजतक उन नीलकण्ठ-महादेव की पूजा-अर्चा हम बड़े श्रद्धाभाव से विधि-पूर्वक करते आ रहे हैं।

लेकिन यह कैसा वैषम्य है कि एक वार विषपान करने वाले नीलकण्ठ-महादेव की पूजा-अर्चा तो हम युग-युगान्तरों से निरन्तर करते आ रहे हैं और जो मूक वृक्ष आदि-काल से ही स्वयं विषपान करके हमें विना मांगे अमृत-तुल्य जीवन-दायिनी ऑक्सीजन (प्राण-वायु) देते आ रहे हैं, उन पर नित्य ही निर्ममता पूर्वक कुल्हाड़ी चलाते हैं।

अपने क्षुद्र स्वार्थों की पूर्ति एवं सुविधा-भोग के लिए हमने जीवन के लिए नितान्त आवश्यक हवा, पानी और अन्न आदि सबको ही प्रदूषित कर डाला है। मुक्ति-दायिनी मानी जाने वाली गंगा और गंगाजल, जो शुद्धता और पवित्रता के पर्याय माने जाते थे, उन्हें भी हमने भयंकर रूप से प्रदूषित कर दिया है। जिस जमुना-तट पर व्रज-वालाएँ कभी वड़े चाव से गीत गाती हुईं 'जमुना-जल' भरने जाया करती थीं उस जमुना को एक ऐसा गन्दा और विषैला नाला वना दिया गया है कि उसका एक चुल्लू जल पीना ही किसी न किसी रोग को निमंत्रित करना है।

देशभर के पवित्र तीर्थों को विदेशी मुद्रा कमाने की चाह में सैलानियों के आमोद-प्रमोद हेतु पर्यटन-स्थल बनाकर उनके धार्मिक महत्व को गौण कर दिया गया है, जहाँ जाकर आदमी कभी शान्ति का अनुभव किया करता था। इसके अतिरिक्त ध्वनि-प्रदूषण, धुआं-प्रदूषण, प्लास्टिक-प्रदूषण, कचरा-प्रदूषण, बे-रोक बढ़ता जन-प्रदूषण आदि न जाने कितने प्रकार के जानलेवा प्रदूषण हमने पाल लिए हैं। इनके साथ ही मानसिक कुंठा और वैचारिक-प्रदूषण भी घर-घर में और जन-जन में व्याप्त हैं, जिनके फलस्वरूप आज का 'आदमी' कहा जाने वाला जीव वुरी तरह से संत्रस्त है।

कभी जल-प्रलय की बात सुना करते थे, जिसमें सारी पृथ्वी जल-जलाकार हो जाती थी और जीव-मात्र को एक साथ ही मोक्ष प्राप्त हो जाता था। लेकिन मनुष्य न चेता तो आगामी प्रलय 'जल-प्रलय' न होकर

'प्रदूषण-प्रलय' ही होगा जिसमें आदमी नाना प्रकार की भयंकर व्याधियों से ग्रस्त होकर दारुण यंत्रणाएँ भोगते ही मरेगा।



स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश ने भौतिक-उन्नति चाहे जितनी कर ली हो, चाहे अन्तरिक्ष में भी जगह बनाली हो, लेकिन चारित्रिक दृष्टि से तो हम गर्त में ही उतरे हैं। दीर्घकालीन गुलामी भोगते भी देश का जितना चारित्रिक पतन नहीं हुआ, उससे कहीं अधिक स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की आधी शताब्दी में ही होगया। इसका मुख्य कारण यही लगता है कि आज़ादी के बाद देश का सारा ध्यान, मात्र भौतिक-विकास की ओर ही लगा रहा। चरित्र-निर्माण की बात तो शायद भुला ही दीगई अथवा इसकी कोई आवश्यकता महसूस नहीं की गई। लेकिन आज देश में हिंसा तथा नाना प्रकार के अनाचारों व भ्रष्टाचारों का जो सैलाब उमड़ रहा है, उसका मूल कारण यह चारित्रिक-ह्रास ही लगता है।

किसी भी देश के निवासियों का चरित्र ही उसकी सबसे बड़ी पूंजी होती है, जिसका ह्रास अनेक प्रकार के अनर्थ पैदा कर सकता है। लेकिन न तो इस 'चरित्र' का कहीं बाहर से आयात किया जा सकता है, न यह किसी अन्तरराष्ट्रीय बाज़ार में उपलब्ध है और न ही इसे विश्व-बैंक से उधार लिया जासकता है। राष्ट्रीय-चरित्र का निर्माण तो गोरक्ष और गाँधी जैसे चरित्रवान महापुरुषों की अगुआई में देशवासियों को ही करना है।

परन्तु, विडम्बना यह है कि हम तो आज किसी नाथ-मठ में गोरख की आरती गाकर और राजघाट पर गाँधी को 'भाव-भीनी' श्रद्धांजलि देकर ही अपने कर्तव्य की पूर्णता मान लेते हैं।



जिस समय चूरू में प्रातःस्मरणीय स्वामी गोपालदासजी व भानीनाथजी महाराज ने वृक्षारोपण एवं उनके पोषण-संरक्षण का काम प्रारम्भ किया था, तब 'पर्यावरण' और 'प्रदूषण' जैसे शब्द यहाँ प्रचलित ही

नहीं थे। परन्तु इन दोनों महात्माओं ने वृक्षों के महत्त्व तथा उनकी आवश्यकता को तभी गहराई से महसूस कर लिया था। स्वामी गोपालदासजी ने अनेक विघ्न-बाधाओं के आड़े आने पर भी अपना खून-पसीना एक करके रेतीले धोरों की हजारों-हजार बीघा 'धोळी' धरती में अनगिनत झाड़ और वृक्ष लगाकर मन-भावनी तथा जीवन-दायिनी हरियाली पैदा करदी, जहाँ मनुष्यों के अतिरिक्त पशु-पक्षी भी विश्राम पाते थे। इसी प्रकार, श्री भानीनाथजी ने बड़ी संख्या में वृक्ष लगाकर और अपने कन्धों पर पानी के घड़े ढो-ढो कर उन्हें सींचा, भरपूर पोषण और रक्षण दिया। भले ही इन सबके फोटो-एलबम तैयार न किए गये हों, लेकिन उनके द्वारा लगाये गये अनेक वृक्ष हमें हरियाली और खुशहाली तो आज भी दे ही रहे हैं।

उधर, जब निष्काम-भाव से विविध रूपों में की गई जन-सेवा के उपहार-स्वरूप तत्कालीन बीकानेर राज्य-सरकार ने स्वामी गोपालदासजी को जेल भेज दिया (सन् १६३२ ई०), तब और बाद में भी भानीनाथजी महाराज ने ही जीवन-पर्यन्त उस गोचर-भूमि की जी-जान से रक्षा की। लेकिन उनके चले जाने के बाद तो बड़ी जल्दी ही मैदान साफ कर दिया गया।

वे तो चले गये, परन्तु यह बात तो नगर-वासियों के सोचने की थी कि उस महापुरुष द्वारा इतने यत्न और श्रम से तैयार की गई उस गोचर-भूमि की रक्षा करते, जिसकी आज भी नितान्त आवश्यकता है।



गोरक्ष से सम्बन्धित जो साहित्य आज उपलब्ध है, वह मुख्यतया उनके साधना-पक्ष या उनके द्वारा रचित कहो जाने वाली वाणियों आदि पर ही आधृत है। गोरक्ष और उनके सम्प्रदाय के अन्य नाथों का जीवन-वृत्त मात्र परवर्ती अनुश्रुतियों एवं सम्प्रदाय में चालू परम्पराओं पर ही टिका है, जिनमें अत्युक्तियों के अतिरिक्त भारी विरोधाभास भी पाया जाता है। उनके अनुयायियों और भक्तों का सारा सोच आस्था व प्रशस्ति-गान पर ही केन्द्रित रहा, जिसके परिणामस्वरूप उन्होंने गोरक्ष तथा सम्प्रदाय के अन्य

नाथों को भी अधिकाधिक महिमा-मण्डित करने के लिए जो जी में आया, लिख डाला, अनेक कल्पित बातें जोड़दीं, जिससे तथ्यों और प्रमाणों के अभाव एवं उनकी उपेक्षा के कारण सही इतिहास सामने नहीं आ पाया।

एक उदाहरण द्रष्टव्य है-- नाथ-पंथ की मान्य बारह मुख्य शाखाओं में एक शाखा 'कपिलानी' भी है। सम्प्रदाय की एक परम्परा के अनुसार इस शाखा के प्रवर्तक कपिल मुनि हैं (हजारीप्रसाद द्विवेदी, नाथ-सम्प्रदाय, पृष्ठ ११)। लेकिन सांख्य-दर्शन का प्रतिपादन करने वाले कपिल मुनि का समय तो गोरक्ष से अनुमानतः डेढ़-सहस्राब्दि पहले माना जाता है, अतः वे गोरखपंथ की कपिलानी-शाखा के प्रवर्तक कैसे हो सकते हैं?

दूसरी परम्परा के अनुसार कपिलानी-शाखा के प्रवर्तक अजयपाल हैं (नाथ-सम्प्रदाय, पृष्ठ १४)। गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर से प्रकाशित 'योगवाणी' के 'नाथ सिद्ध चरित विशेषांक' (जनवरी, १६८४) में इन योगिराज बाबा अजयपाल का जो विस्तृत परिचय (पृ० २६६-२७५) छपा है, उसमें बतलाया गया है कि गोरख-पंथ के अन्तर्गत कपिलानी-शाखा का प्रवर्तन निर्विवाद रूप से इन अजयपाल ने किया था, जिनका समय विक्रम की १६वीं शताब्दी है। साथ ही यह भी लिखा गया है कि अजयपाल पर महामुनि कपिलदेव की योग-प्रक्रिया का विशिष्ट प्रभाव था।

किन्तु, मात्र इस आधार पर कि अजयपाल (जो कपिल मुनि से लगभग दो-हजार वर्ष परवर्ती हैं) कपिल की योग-प्रक्रिया से प्रभावित थे, उन स्वयं को ही कपिल मुनि घोषित कर देना कहाँ तक संगत है? जैसा कि लगातार किया जा रहा है (द्रष्टव्य-नाथ-सम्प्रदाय, पृष्ठ ११; गोरखनाथ और उनका युग, पृ० २४०, इत्यादि)।

प्रस्तुत पुस्तक मे ऐसे ही कई अन्य परस्पर विरोधी एवं विवादास्पद मुद्दो की ओर भी ध्यान दिलाया गया है। कहीं-कहीं कोई समाधान भी सुझाया गया है तो कहीं किसी मान्यता का खण्डन भी करना पड़ा है। हाडि या हाडीपा (जालंधरिनाथ) के साथ हुडेरा-सिद्धान (रतनगढ़) के नाम-सम्बन्ध -की बात मेरी स्वयं की अवधारणा है, जो विचारणीय तो लगती है, लेकिन

इसके लिए कोई आग्रह नहीं है, यह एक विनम्र सुझाव-मात्र है। आशा है, पुस्तक में उठाये गये सभी सवालों पर प्रबुद्ध-पाठक, मनीषी विद्वान् एवं पीठाधीश्वर पुनर्विचार करने का कष्ट स्वीकार करेंगे।

आवश्यकता तो इस बात की भी लगती है कि गोरक्ष व नाथ-सम्प्रदाय का इतिहास ठोस-तथ्यों और पुष्ट-प्रमाणों के आधार पर ऐतिहासिक दृष्टिकोण अपनाते हुए पुनः लिखा जाए, जिसमें नाथ-सम्प्रदाय की वर्तमान स्थिति का भी सही और समुचित आकलन हो।

डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार शंकराचार्य के बाद गोरक्षनाथ जैसा प्रभावशाली और महिमान्वित महापुरुष भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ। डॉ० रांगेय राघव ने भी अपने शोध-प्रबन्ध में ऐसा ही कुछ लिखा है। सुमित्रानन्दन पन्त ने जब आचार्य रजनीश से पूछा कि भारत के धर्माकाश में वे कौन बारह लोग हैं जो सबसे चमकीले सितारे हैं, तो आचार्य रजनीश ने जो १२ नाम बताये उनमें पतंञ्जलि व गोरख के नाम भी हैं। इसके बाद पन्तजी ने क्रमशः ७, ५ और ४ नाम पूछे तो आचार्य रजनीश ने इन तीनों सूचियों में भी पतञ्जलि और गोरक्ष के नाम तो गिनाये ही हैं (देखें-आचार्य रजनीश के प्रवचन, 'मरौ हे जोगी मरौ' पृ० २-५)। इससे अनुमान लगाया जासकता है कि गोरक्ष कितने महिमाशाली व्यक्ति थे।

लेकिन विडम्बना यह है कि गोरक्ष (गोरख) आज भारत-भूमि से लगभग लुप्त-जैसे हो गये हैं। विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में गोरक्ष कहीं दिखलाई नहीं पड़ते। विद्यालय अथवा महाविद्यालय का विद्यार्थी नहीं जानता कि गोरक्ष कौन थे? आज तो उनका प्रभाव मात्र गोरखनाथी-मठों की चारदीवारियों तक ही सीमित होकर रहगया है। भारतीय-समाज में गोरक्ष को पुनः स्थापित करने का दायित्व तो अब प्रबुद्ध नाथ-योगियों और पीठाधीश्वरों पर ही है, यदि वे इसकी आवश्यकता समझें।



श्री भानीनाथजी महाराज झोली लाने के क्रम में हमारे घर भी आया करते थे, तभी मैंने कई बार उनके दर्शन किये थे। कभी-कभार उन्हें नंगे-पांवों, हाथ में छोटी सी कुल्हाड़ी लिए गोचर-भूमि की रक्षार्थ घूमते भी देखा था। इसके अतिरिक्त मेरा उनसे कभी कोई प्रत्यक्ष संपर्क नहीं रहा, कभी उनसे रू-बरू नहीं हुआ। हॉ, उनके सादे रहन-सहन की छाप मन पर अवश्य थी और उनके बारे में जब कभी कुछ सुना तो अच्छा ही सुना। आज मैं पुनः उस महात्मा को सादर नमन करता हूँ।

डॉ० शेरसिंह बीदावत सन् १६६२ ई० में राजकीय सेवा से निवृत्त होने के बाद मेरे पास आये थे। वे राष्ट्रकूट-बीदावतों का एक सांगोपांग प्रामाणिक इतिहास लिखना चाहते थे। लेकिन तब तक किसी मानसिक पीड़ा के कारण मेरे हाथ से कलम छूट चुकी थी और मैं चाहते हुए भी उन्हें सहयोग नहीं दे पाया। परिणामस्वरूप वह इतिहास-ग्रन्थ अनलिखा ही रह गया, जिसके लिए मैं स्वयं अपने को ही दोषी मानता हूँ।

गत-वर्ष डॉ० बीदावत मेरे पास पुनः आये और इस बार एक हस्तलिखित कापी भी साथ में लाये, जिसमें श्री भानीनाथजी का सामान्य सा जीवन-परिचय एवं कतिपय लोगों के साथ जुड़े उनके कुछ प्रसंग भी लिखे थे। वे भानीनाथजी पर कोई पुस्तक लिखना चाह रहे थे। मेरा कहना था कि मात्र इस सामग्री के आधार पर कोई पठनीय और अच्छे-स्तर की पुस्तक नहीं लिखी जा सकती। मैंने इसमें गोरक्षनाथ व उनके सम्प्रदाय की पृष्ठभूमि सहित कुछ अन्य आवश्यक बातों का समावेश करने का भी सुझाव दिया, जिसे उन्होंने मानलिया और लगन के साथ इस काम में जुट गये।

अपने निरन्तर गिरते स्वास्थ्य और क्षीण होती नेत्र-ज्योति के कारण मैं इस काम में सहयोग कर पाने में अपने को असमर्थ ही महसूस कर रहा था, किन्तु डॉ० बीदावत के निरन्तर आवागमन और आग्रह के कारण मैंने इस काम में हाथ बंटाना स्वीकार कर लिया तथा अपनी क्षमता के अनुसार सहयोग करने का प्रयत्न भी किया। किन्तु, यह तो डॉ० बीदावत की लगन और उनकी भाग-दौड़ का ही फल है कि पुस्तक पाठकों के हाथों तक पहुँच

पारही है। मूल्यांकन तो स्वयं पाठक ही करेंगे। हाँ, पुस्तक को पढ़कर यदि वे श्री भानीनाथजी के जीवन से कोई प्रेरणा ग्रहण कर पाये, तो यही इस पुस्तक की सार्थकता होगी। एक निस्पृह और परोपकारी सन्त को याद करने और जनता के समक्ष उनका जीवन-चरित्र प्रस्तुत करने के लिए डॉ० शेरसिंह को साधुवाद।

दिनांक जून ६, १९९९ ई०

गोविन्द अग्रवाल
नगर-श्री, चूरू

# आत्म-निवेदन

आज से लगभग ६० वर्ष पूर्व मेरे जन्म-गाँव जासासर की घटना है, तब मै करीब चार-पाँच वर्ष का हूगा कि एक लम्बी बीमारी का शिकार हो गया। कई दिनो तक बुखार नहीं उतरा। भूख बन्द होगई। अशक्त होने के कारण चारपाई पर ही लेटे रहना पड़ता। गाँव में घरेलू दवा [illegible] सिवाय, इलाज का कोई दूसरा साधन नहीं था। मेरी गिरती हालत देखकर माँ (लाडकंवर) की ऑखों से बहुधा आंसू झर पड़ते। पिताजी (नारायणसिंहजी) उस समय कलकत्ता में रहा करते थे। माँ के सामने बड़ी विकट समस्या आ पडी थी। इसी बीच श्री भानीनाथजी साध्वी बरजीबाई से मिलने जासासर आये। वे जब जासासर आते, तब हमारे घर भी अवश्य आया करते। उस दिन भी वे घर आये। माँ ने उन्हे मेरी बीमारी का दुखड़ा कह सुनाया। भानीनाथजी मुझे देखने पड़वे में आये और मुझसे पूछा, "क्यूं रै, तेरी मां तनै रोटी कोनी देवै के?" मैंने 'ना' में गर्दन हिलादी तो कहने लगे, "चिन्त्या मतकर, तड़कै (कल) देदेसी।" और वे मेरे सिर पर हाथ फेर कर चले गये। मेरी माँ कहा करती थीं कि तुमने दूसरे दिन ही खाने के लिए रोटी मांगली। इस प्रकार मैं जल्दी ही स्वस्थ होगया। तब से आज तक श्री भानीनाथजी महाराज के प्रति मेरा गहरा श्रद्धाभाव बना हुआ है।

इस श्रद्धाभाव की निरन्तरता बनाये रखने में मेरे परिवार की बड़ी भूमिका रही है। मेरी माताजी और पिताजी-दोनों ही श्री भानीनाथजी के प्रति बड़ा श्रद्धा-भाव रखते थे। जब पिताजी कलकत्ता से गाँव आये हुए होते तब वे भानीनाथजी के पास रात्रि जागरण आदि कार्यक्रमों में परिवार सहित चूरू आया करते थे। मेरे अग्रज स्व० सादूलसिंहजी तो समझ पकड़ने के बाद से भानीनाथजी के शरीर छोड़ने तक उनके निकट-सम्पर्क में रहे।

भानीनाथजी की उन पर बड़ी कृपा थी। वे सत्संग और रात्रिजागरणों में आगे होकर भजन-वाणियाँ बोला करते थे। बाद में भी वे भानीनाथजी महाराज की बरसी के अवसर पर दशहरे के दिन चूरू नाथाश्रम में सदैव उपस्थित होते रहे। उन्हें भानीनाथजी महाराज के जीवन से सम्बन्धित कई प्रसंग याद थे, जिन्हें वे सत्संग मण्डली में सुनाया करते थे।

भानीनाथजी महाराज मेरी माताजी को तो 'जाटणती' (जाटू तँवर राजपूत परिवार की बेटी होने से) कहकर सम्बोधित किया करते थे। इससे उनका कृपाभाव ही परिलक्षित होता था। यह श्री भानीनाथजी महाराज का ही विशेष प्रभाव रहा कि हमारा पूरा परिवार मांस-मदिरा आदि के सेवन के चक्कर में नहीं फँसा, जबकि उन दिनों राजपूत-समाज में इनका सेवन एक सामान्य बात थी।

श्री अमृतनाथ माध्यमिक विद्यालय, सातड़ा का प्रधानाध्यापक रहते समय (१६८४-८६ ई०), मैंने विद्यालय की वार्षिक पत्रिका 'अञ्जली' के दो अंक प्रकाशित करवाये थे। तब बड़ी इच्छा रही कि श्री भानीनाथजी महाराज का जीवन-परिचय भी प्रकाशित कराया जाये। इसके लिए मैंने बाबा शंकरनाथजी से उनके जीवन से सम्बन्धित आवश्यक सामग्री देने के लिए निवेदन किया तो उन्होंने सामान्य तौर पर कह दिया, "देस्यां।" उसके बाद कई वर्ष निकल गये। सन् १६८८ में दीपचन्द जी पूर्वा (भाईजी) के साथ बाबा सोमनाथजी के दर्शन करने उनके सरदारशहर-आश्रम में गया तो उन्होंने कहा, "अरे, जासासर का जसिया', तूं भानीनाथजी पर पोथी लिखै है, सुणी है, अबार सी लिखै तो घणी बातां मिलसी।" मैंने सहज भाव से उत्तर दिया, "महाराज, पोथी तो आपकी कृपा होसी जद ही लिखीजसी।" चार वर्ष फिर निकल गये। मैं सन् १६६२ ई० में वरिष्ठ उपजिला शिक्षा-अधिकारी (चूरू) के पद से राज्य सेवा से निवृत्त हो गया।

---

१. मेरा जन्म-नाम जसवन्तसिंह था। यह बात स्व० अग्रज सादूलसिंहजी ने उन्हें बताई थी। इसी जसवन्तसिंह को जसिया कहा गया है।

वर्ष १६६८ ई० के प्रारम्भ में बाबा शंकरनाथजी ने मुझे बुलाकर एक कॉपी देते हुए कहा कि इसमें श्री भानीनाथजी के जीवन पर कुछ लिखा हुआ है, इसकी भाषा सुधारकर मुझे शीघ्र लौटा देना। मैंने श्री रामलालजी शर्मा, पत्रकार (रायपुरियावाले) के साथ श्री राम-मन्दिर (स्टेशन रोड), चूरू के एक सुविधाजनक कक्ष में बैठकर कॉपी के आलेख में भाषा-सुधार किया और उसकी एक प्रति अपने पास रखते हुए दूसरी प्रति सहित मूल कॉपी शंकरनाथजी महाराज को लौटादी। उस कॉपी में श्री भानीनाथजी का सामान्य सा जीवन-परिचय और उनसे सम्बन्धित कुछ प्रसंग लिखे हुए थे, जिनके आधार पर कोई पठनीय पुस्तक तैयार कर पाना कठिन था।

कुछ दिनों बाद मैंने अपने पास वाली प्रति श्रद्धेय गोविन्दजी अग्रवाल को दिखाई तो उन्होंने सुझाव दिया कि इसकी पृष्ठ-भूमि में नाथ-सम्प्रदाय से सम्बन्धित आवश्यक विषय-सामग्री, भानीनाथजी की गुरु-परम्परा एवं उनके साथी व सम-सामयिक नाथों का संक्षिप्त परिचय जोड़कर ही श्री भानीनाथजी महाराज का पूरा जीवन-परिचय तैयार किया जाना चाहिए। तब एक लगन जागी और नाथजी-महाराज की कृपा से ही आज वह आलेख पुस्तक-रूप ले पाया है।

श्री गोविन्दजी अग्रवाल ने अस्वस्थ रहते हुए भी पूरे आलेख में आवश्यक संशोधन, परिवर्तन, परिवर्द्धन कर इसे प्रेरक व पठनीय बनाने के लिए सब कुछ किया। चूरू, झुंझुनूं और सीकर जिले के कई नाथमठों की यात्राओं में भी वे साथ रहे। पुस्तक में नाथ-सम्प्रदाय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि संजोने में उनकी अनुभवी दृष्टि और सप्रमाण पुष्टि से कई नवीन तथ्य उजागर हो पाये हैं। उदाहरणार्थ-

(१) नोहर (जिला हनुमानगढ़) के नाथमठ का वि० सं० ११०२(३) का शिलालेख और उसके आधार पर गोगा चौहान और गोरखनाथ की सम-सामयिकता के साथ कुछ अन्य बातों पर पुनर्विचार।

(२) हुडेरा-सिद्धान (जोगियान), (तह० रतनगढ़) से प्राप्त नाथ-योगियों के मूर्तिफलक के आधार पर हाडिपा (जालंधरिपा) नाम से हुडेरा नाम की संभाव्यता।

(३) माननाथी शाखा के प्रवर्तक राजा रसालू और मूल स्थान टाई (जि० झुंझुनूं) की प्रामाणिकता की पुष्टि। गोपीचन्द द्वारा माननाथी शाखा के प्रवर्तन की मान्यता का खण्डन।

(४) झुंझुनूं नाथमठ में पाई गई वि० सं० १६१६ की हस्तप्रति के आधार पर झुंझुनूं मठ की स्थापना के मान्य समय वि० १६००, १७०० की बजाय संवत् १८७५ वि० के आस-पास होने की संभाव्यता।

(५) जोधपुर के महामन्दिर को मन्नाथियों का आदि स्थान मानने की पुरानी मान्यता का सप्रमाण खण्डन।

(६) नाथ-पंथ की १२ शाखाओं के प्रवर्तकों, स्थानों एवं कालखण्डों पर विभिन्न अनुश्रुतियों एवं परम्पराओं पर चिन्तन के फलस्वरूप विद्वानों द्वारा पुनर्विचार करने का अनुरोध आदि।

इस प्रकार नाथ-संप्रदाय की विस्तृत, किन्तु बिखरी तथा विरोधाभासी सामग्री को समेकित कर युक्ति-युक्त ढंग से निरूपित कराने में उनका बड़ा योगदान है। मेरे आग्रह पर उन्होंने इस पुस्तक की भूमिका (दो-शब्द) लिखी है, जिसका सौभाग्य बहुत कम पुस्तकों को मिला है।

गत वर्ष (१६६८ ई०) में बाबा शंकरनाथजी ने भानीनाथजी महाराज के जीवन सम्बन्धी जो प्रसंग एकत्र किए थे उनमें से लगभग आधे प्रसंग इस पुस्तक में लिए गये हैं तथा शेष पिछले दिनों चूरू नगर-निवासियों से सम्पर्क कर एकत्र किए गये हैं। इन प्रसंगों के नीचे चूरू के कई परिवारों की टिप्पणियाँ श्री गोविन्दजी अग्रवाल की जानकारी के आधार पर लिखी गई हैं। इस सम्पर्क के दौरान ऐसा अनुभव हुआ कि भानीनाथजी महाराज

से सम्बन्धित प्रसंग सैकड़ों लोगों के पास हैं, किन्तु उन्होंने अपने जीवन के ६८ वर्ष ही हमें दिए थे, इसलिए यहाँ पुस्तक में केवल ६८ प्रसंगों को ही प्रकाशित किया जा रहा है।

जिन नगर-वासियों से ये प्रसंग प्राप्त हुए हैं उन्होंने बड़े आत्म-विश्वास के साथ ये प्रसंग सुनाये हैं, जिन पर शंका करने का कोई कारण नजर नहीं आता। उन सबके प्रति विनम्र आभार प्रकट करता हूँ।

पुस्तक के लिए जानकारी एकत्र करने हेतु चार जिलों के कुछ नाथाश्रमों की यात्राएँ की गई। चूरू जिले में सरदारशहर, देराजसर बणी, जासासर, सातड़ा, बूंटिया; झुंझुनूं जिलें मे बिसाऊ, टाई, झुंझुनूं; सीकर जिले में फतेहपुर और लक्ष्मणगढ जाना हो सका। हनुमानगढ़ जिले में नोहर नाथ मठ की यात्रा मेरे कहने से श्री शंकरलालजी झखनाड़िया एवं श्री सन्तोष-कुमार जी गोयल ने की। उपरोक्त कुछ यात्राओं में श्री सुबोधकुमार जी अग्रवाल, दो यात्राओं में श्री रामलालजी पत्रकार, एवं एक यात्रा में श्री रामलालजी कुदाल, श्री रामगोपालजी बहड़ व श्री गिरधारीलाल सैनी (फोटोग्राफर) भी साथ रहे।

लक्ष्मणगढ़ नाथाश्रम के पीठाधीश्वर श्री बैजनाथजी महाराज ने अपने आश्रम के प्रज्ञान-मन्दिर से डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखित 'नाथ संप्रदाय' पुस्तक सहित गोरखपुर से प्रकाशित योगवाणी के कई विशेषांक एवं नाथवाणी के कई अंक सहज भाव से अवलोकनार्थ उपलब्ध कराये। उन्होंने अपने द्वारा लिखित दो पुस्तकें-सहजयोगी संत श्री श्रद्धानाथजी महाराज (प्रथम प्रका० १९९३, द्वितीय-१९९६ ई०) भी प्रदान कीं। मैं हृदय से उनका कृतज्ञ हूँ। माननाथी शाखा में एक प्रबुद्ध लेखक, साहित्य-प्रेमी व योग-साधना में निष्णात पीठाधीश्वर के रूप में उनकी विशेष ख्याति है।

झुंझुनूं नाथाश्रम के स्व० जोगेश्वर मोतीनाथजी के समय के एक हस्तलेख का ब्लॉक पुस्तक में दिया जाना था, अतः पुनः झुंझुनूं गया। वहाँ

मठेश्वर ओमनाथजी ने अविलम्ब उस पुष्पिका का 'पाना' मुझे सौंप दिया जिसकी फोटो-स्टेट प्रति कराकर लाया और अब उसे पुस्तक में यथा-स्थान दिया गया है। इस त्वरित सहयोग के लिए ओमनाथजी महाराज का आभारी हूँ।

चूरू जिला पुस्तकालय से पठनार्थ दो महत्त्वपूर्ण सन्दर्भ-ग्रन्थ प्राप्त हुए, एतदर्थ पुस्तकालयाध्यक्ष श्री देवकरणसिंह फगेड़िया तथा ईश्वरीप्रसादजी हारीत के प्रति भी आभारी हूँ।

चूरू नाथाश्रम के वर्तमान महन्त श्री देवीनाथजी ने भानीनाथजी महाराज के तीन चित्र उपलब्ध करवाये, जिन पर इस प्रकार छपा हुआ था-

(१) श्री श्री १०८ भानीनाथजी महाराज; आपका दास-तोलाराम पारख, प्रकाशक-सागरमल अमीचन्द पारख।

(२) परम पूज्य योगीराज श्री १०८ बाबाजी भानीनाथजी महाराज; आपका दास-रामेश्वर पेड़ीवाल, चूरू निवासी:

(३) स्वामी श्री भानीनाथजी महाराज; सेवक-सीताराम भरतिया।

उपर्युक्त तीनों चित्रों को प्रकाशित कराने वाले महानुभावों की श्री भानीनाथजी के प्रति गहरी श्रद्धा प्रकट होती है। तीनों चित्रों को पुस्तक में यथा-स्थान दिया गया है, एतदर्थ उन सभी श्रद्धालु महानुभावों के प्रति हृदय से आभार।

इस पुस्तक को प्रकाशित कराने के पीछे मेरा उद्देश्य नाथजी महाराज द्वारा बचपन में मुझ पर किये गये उपकार से किंचित् उऋण होना और इस क्षेत्र के लोगों को भानीनाथजी महाराज के व्यक्तित्व एवं उनके लोकोपकारी कार्यों से अवगत कराना ही है, जिसके लिए यह पुस्तक निःशुल्क ही सबके पठनार्थ वितरित की जावेगी।

इस कार्य में जीवन-संगिनी श्रीमती पुष्पा बीदावत की बराबर सहमति रही है और उन्होंने पुस्तक-प्रकाशन में व्यय होने वाली सारी राशि अपने अल्प बचत खाते से देने का सहर्ष सहयोग दिया है।

प्रूफ संशोधन श्री गोविन्दजी अग्रवाल, श्री रामगोपालजी बहड़ और मैंने मिलकर किया है। फिर भी त्रुटियां रह जाने की संभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता। पाठक कृपया सुधार लेने का कष्ट करें।

एस० के० प्रिंटर्स के श्री सुशीलकुमार शर्मा, श्री जितेन्द्रकुमार शर्मा व कम्प्यूटर ऑपरेटर श्री अरविन्द गुप्ता का मुद्रण कार्य में आद्योपान्त भरपूर सहयोग रहा, एतदर्थ हार्दिक धन्यवाद।

पुस्तक को प्रस्तुत करने में जिन-जिन महानुभावों ने यत्किंचित भी सहयोग दिया है, मैं उन सबके प्रति आभारी हूँ।

बीदावत भवन, चूरू
दिनांक १६ जून, १६६६ ई०

शेरसिंह बीदावत



वचनसिद्ध अवधूत श्री भानीनाथजी
(वि० सं० १६४२ - २०१०)

"सर्वान प्रकृति विकारान बधू नोतित्यऽवधूतः।"
(सिद्ध सिद्धान्त पद्धति)

# व्यक्ति

प्रातः स्मरणीय अखण्ड बाल-ब्रह्मचारी, लंगोट के सच्चे, वचन के पक्के, सरलचित्त, मितभाषी, मृदुभाषी और सत्यभाषी श्रीभानीनाथजी महाराज नन्हें बालक की तरह निश्छल और निष्पाप थे। दुनिया में रहते हुए भी वे दुनियादार नहीं थे। चाहे हड्डियाँ कँपा देनेवाली कड़ाके की सर्दी हो, चाहे तन झुलसा देने वाली भीषण गर्मी, वे सदैव नंगे पाँवों ही घूमा करते थे। उनका खाना सात्विक और देश के सबसे गरीब आदमी के खाने जैसा नितान्त साधारण होता था। साधु बनने के बाद दिन में एक जून भिक्षाटन के लिए कुछ घरों में बारी-बारी से जाते थे। झोली में जो रोटियाँ आतीं उन्हें ही छाछ में भिगोकर अन्य साधुओं के साथ मिल बैठकर खा लेते थे, शेष कुत्तों को डाल देते थे।

रात को जब सारी दुनिया पैर पसार कर सोती, तब वे एकान्त में आसन लगाकर ध्यान निमग्न हो जाते थे। एक ही चादर रखते थे। जब बाहर जाते तब उसे बदन पर लपेट लेते, रात को जब थोड़ी देर के लिए सोते तब आधी चादर बिछा लेते, आधी ओढ़ लेते। किसी भी प्रकार के नशे या अन्य विकारों से परे थे। कहा तो यह गया है कि "काजर की कोठरी में कैसो हू सयानो जाय, एक लीक काजर की लागे है पै लागे है।" लेकिन श्रीभानीनाथजी इसके अपवाद रहे। दुनिया रूपी काजर की कोठरी में रहते हुए भी काजर की यह एक लीक उन्हें लग नहीं पाई। उन्होंने तो अपनी जीवन-चदरिया जस की तस बे-दाग़ धरदी।

श्रीभानीनाथजी ने कोई मौखिक या लिखित उपदेश नहीं दिये। उनका सद्आचरण और उनकी सात्विक जीवन-पद्धति ही उनकी आचार-संहिता थी, जिसको अपनाकर आज का कुंठा-ग्रस्त व्यक्ति भी दिन-रात की हाय-हाय को भुलाकर शान्ति व सन्तोष-पूर्वक जीवन-यापन कर सकता है।



# ध्यान-योगी

ध्यान-योग में तीन बातें मुख्य हैं-

(१) चित्त की एकाग्रता

(२) चित्त की एकाग्रता के लिए उपयुक्त जीवन की परिमितता और

(३) साम्य या सम-दृष्टि।

इन सब बातों के बिना सच्ची साधना नहीं हो सकती। चित्त की एकाग्रता का अर्थ है, चित्त की चंचलता पर अंकुश। जीवन की परिमितता का अर्थ है, सब क्रियाओं का नपा-तुला होना। सम-दृष्टि का अर्थ है, विश्व की ओर देखने की उदार दृष्टि। इन तीन बातों से ध्यान-योग बनता है। इस त्रिविध साधना के भी साधन हैं। वे हैं-अभ्यास और वैराग्य।

गीता-प्रवचन (१९४७)
-विनोबा

# जन्म और प्रारम्भिक परिचय

चूरू नगर के पश्चिम में २० कि०मी० दूर रतनगढ़ रोड़ पर 'सातड़ा' नामक गाँव अवस्थित है, जहाँ कुछ न्योळ जाट परिवार भी पीढ़ियों से बसे हुए हैं। लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व यहाँ एक न्योळ जाट परिवार में दो सहोदर भाई थे। बड़े भाई का नाम था मोटाराम और छोटे भाई का हुणताराम। मोटाराम के पुत्र का नाम भींवाराम एवं हुणताराम के बेटे का नाम भानीराम था। भींवाराम उम्र में भानीराम से बारह वर्ष बड़ा था। शंकरनाथजी[1] के अनुसार भानीराम का जन्म वि० सं० १९४२ में हुआ था। जब भानीराम पाँच वर्ष का हुआ तभी पिता हुणताराम का देहावसान हो गया एवं थोड़े समय बाद भानीराम की माता भी चल बसीं। तब बड़े बाप मोटाराम ने परिवार की पूरी जिम्मेदारी संभालते हुए भानीराम के प्रति विशेष स्नेह बनाये रखा। भींवाराम व भानीराम में भी सगे भाइयों जैसा प्रेमभाव था। कुछ बड़ा होने पर भानीराम भी भाई के साथ खेत पर जाने लगा।

भींवाराम का विवाह तो हो चुका था और जब भानीराम की आयु १८ वर्ष के लगभग हो गई तो मोटाराम ने उनसे कहा- 'भानी बेटा, अब तेरो भी ब्याह करस्यां।' लेकिन भानीराम ने ब्याह करने से इन्कार कर दिया। कुछ दिनों बाद एक चौधरी अपनी बेटी की सगाई भानीराम के साथ करने के लिए उनके घर आया। मोटाराम व भींवाराम ने सगाई के लिए भानीराम पर बहुत जोर डाला लेकिन भानीराम ने साफ इन्कार कर दिया कि मैं कतई तौर पर विवाह नहीं करवाऊंगा। आगन्तुक चौधरी निराश

---

१. इनका जन्म नाम किसनाराम था। भींवाराम के कनिष्ठ पुत्र होने के कारण ये भानीराम (बाद में भानीनाथ) के भतीजे ही लगते हैं। इनको छोटी अवस्था में ही नाथ-सम्प्रदाय में दीक्षा दे दी गई और तब ये शंकरनाथ के नाम से जाने जाने लगे।

होकर लौट गया। तब मोटाराम ने पुनः भानीराम को बहुत ऊँचा-नीचा समझाया किन्तु भानीराम ने सर्वथा इन्कार करते हुए कहा कि मैं तो पिछले सात जन्मों से साधु बनता आया हूँ और अब भी साधु ही बनूंगा।

मोटाराम ने प्रश्न किया कि मैं कैसे मानूं कि तू पिछले जन्म में भी साधु था? भानी बोले कि आपके घर जन्म लेने से कोई २० वर्ष पहले गाँव में अमुक महर्षिया (महारसिया) ब्राह्मणों के घर ओसर (मृत्युभोज) था। उस वक्त भी मैं साधु था और एक अन्य साधु के साथ भोजनार्थ ओसर में आया था।[1] भोजन करने के बाद हम दोनों साथ-साथ ही वापस चले गये थे। कुछ समय बाद मैं आपके घर जन्मा और मेरे जन्म के छह साल बाद दूसरा साधु भी इसी गाँव में जन्मा। मोटाराम ने गाँव के बड़े-बूढ़ों से पूछा तो उन्होने याद करके बताया कि भानीराम की यह बात तो सत्य है। इस ओसर में दो साधु साथ-साथ आये थे और भोजन करके चले गये थे। इस पर घर वालों को कुछ सन्तोष हुआ।

भानीराम छोटी अवस्था में ही एकान्त प्रिय थे। वे घर की एक कोठरी[2] में बालू रेत पर अपना आसन लगाये रहते थे और रात को वहीं जमीन पर सो जाया करते थे। कोठरी के किवाड़ बन्द रखते थे। खेती की ऋतु में दिन में खेत पर जाकर काम भी करते थे लेकिन फिर घर आकर कोठरी में बन्द हो जाते थे। घरवालों ने जब भानीराम से पूछा कि इस प्रकार तुम कब 'तक इस कोठरी में रहोगे, तो उन्होंने जवाब दिया कि मैं

---

१. सातड़ा के चौधरी फूलाराम का कहना है कि दूसरे साधु सातड़ा में ही हेमाराम महर्षिया ब्राह्मण के घर जन्मे थे जिनका जन्म नाम चन्द्राराम था जो बाद में नाथ सम्प्रदाय में दीक्षित होकर द्वारकानाथ के नाम से जाने गये।

२. दिनांक ६ दिसम्बर, १९९८ को जब मैं और रामलालजी 'पत्रकार' जानकारी करने सातडा गये तब गणपतजी न्योळ (पूर्व प्रधान) के सहयोग से हमने कोठरीवाला स्थान देखा था जहाँ अब एक 'छान' बनी हुई है।

इस कोठरी में तब तक रहूँगा कि जब तक बन्द कोठरी से ही मुझे पूरा घर और गाँव न दीखने लग जाएँ।

फिर एक दिन उन्होंने अपनी भाभी रामी देवी (भींवाराम की बहू) से कहा कि अब मैं घर में नहीं रहूंगा, क्योंकि अब इस बन्द कोठरी से ही मुझे घर और गाँव दीखने लगे हैं। वे घर छोड़कर खेत में झोंपड़ी बनाकर रहने लगे। झोंपड़ी के बाहर पास ही चार फुट गहरा गड्ढा खोद लिया और रात्रि में उसके अन्दर खड़े रहकर ध्यान करने लगे। जब पड़ौसी खेतवालों ने पूछा कि रात को इस गड्ढे में क्यों खड़े रहते हो तो उन्होंने सहज भाव से जबाब दिया कि इसमें हानि क्या है? गाय, भैंस, ऊँट सब खेत में रहते हैं, उनकी रखवाली हो जाती है, चोरी का डर नहीं रहता। यह सुनकर वे समझ गये कि भानीराम रात को तपस्या करता है। सब के मन में उनके प्रति श्रद्धा जाग्रत हो गई।

भानीराम गृहस्थ के जंजाल में पड़ना नहीं चाहते थे। उनके स्वयं के अनुसार वे गत सात जन्मों से साधु बनते आ रहे थे और शायद इसीलिए उन्होंने गहराई से इस बात को महसूस कर लिया था कि जो सन्तुष्टि जोग में है, वह भोग में नहीं। जो मजा फकीरी में है, वह अमीरी में नहीं। हाँ, फकीर सच्चा होना चाहिए, वेशधारी पाखंडी फकीर नहीं। और इस चिन्तन के फलस्वरूप उन्होंने नाथ-सम्प्रदाय में दीक्षा लेकर एक सच्चे साधु का जीवन जीने का संकल्प कर लिया तथा दीक्षा लेने के बाद उन्होंने इस संकल्प को बड़ी निष्ठा, ईमानदारी एवं दृढ़ता के साथ पूर्ण किया जिसकी एक झलक दिखाने का प्रयत्न आगे यथा-स्थान किया जायेगा।



# नाथ-सम्प्रदाय

नाथ-सम्प्रदाय का उद्भव प्रायः बौद्ध-धर्म के ह्रास और सम्राट् हर्षवर्द्धन की मृत्यु (६४७ ई०) के पश्चात् माना जाता है। साम्प्रदायिक ग्रन्थों में नाथ-सम्प्रदाय के अनेक नामों का उल्लेख मिलता है। यद्यपि भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में यह उल्लेख मिलता है कि यह मत नाथोक्त अर्थात् नाथ द्वारा कथित है। परन्तु सम्प्रदाय में अधिक प्रचलित शब्द हैं- सिद्ध-मत, योग-मार्ग, योग-सम्प्रदाय और अवधूत[1]-सम्प्रदाय आदि। 'सिद्ध सिद्धान्त पद्धति' मे इस सिद्धमत को ही सबसे श्रेष्ठ बताया गया है[2] और यह सिद्ध-मार्ग ही नाथ मत है। यह विश्वास किया जाता है कि आदिनाथ[3] स्वयं शिव ही हैं और मूलतः समग्र नाथ-सम्प्रदाय शैव है।

नवनाथ और चौरासी सिद्धों की मान्यता बड़ी प्रबल रही है। स्वयं गोरखनाथ ने एक पद में व्यक्त किया है- "नौ नाथ ने चौरासी सिधां आसण धारी हूवा।"[4] इस बात को परवर्ती कबीर ने भी स्वीकार किया है- "नौ नाथ पलको में राखे, सिद्ध चौरासी झुक झुक झांके।"[5] जायसी ने भी नौ नाथ चौरासी सिद्धों की बात लिखी है- "नवोनाथ चलि आवहिं औ चौरासी सिद्ध।"[6] अन्य अनेक लोगों ने भी नौ नाथ और चौरासी सिद्धो[7] की बात कही है और श्रुत-परम्परा में यह बात आज भी बहुप्रचलित है।

---

१. गोरक्ष सिद्धान्त सग्रह में लिखा है कि हमारा मत तो अवधूत ही है। (अस्माकं मत त्ववधूतमेव)- नाथ सम्प्रदाय - डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ० १।

२. वही पृ० २।

३. 'आदिनाथः सर्वेषां नाथानां प्रथमः, ततो नाथ सम्प्रदाय' प्रवृत्त इति नाथ संप्रदायिनो वदन्ति।' - नाथ-सम्प्रदाय - डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ० १।

४. गोरखनाथ और उनका युग - डॉ० रांगेय राघव, पृ० १६६।

५. गोरखनाथ और उनका युग - डॉ० रांगेय राघव, पृ० १६७।

६. जायसी ग्रन्थावली, रत्नसेन सूली खण्ड, पृ० ११३। चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास- गोविन्द अग्रवाल, पृ० ३८६।

७. जो लोग अलौकिक सिद्धियों से परिपूर्ण हों, साधना के द्वारा जिन्होंने चमत्कार पूर्ण शक्तियों को अपने वश में कर लिया हो उन्हें सिद्ध कहते हैं। इनके छह प्रकार

लेकिन इन नाथों और सिद्धों के नाम और क्रम में पर्याप्त अन्तर मिलता है और कहीं कहीं तो कुछ नाम जो एक सूची में हैं वे दूसरी सूची में नहीं हैं। नाथों की सूचियों में सिद्धों के और सिद्धों की सूचियों में नाथों के नाम भी मिले जुले मिलते हैं। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इस पर विस्तार से अपने ग्रन्थ 'नाथ-सम्प्रदाय' में लिखा है और कई सूचियाँ प्रकाशित की हैं।

सामान्य तौर पर गोरखनाथ (गोरक्षनाथ) को प्रायः नवां और अन्तिम नाथाचार्य माना जाता है जिन्होंने कामिनियो के जाल में फंसे अपने गुरु मत्स्येन्द्रनाथ का उद्धार किया था। लेकिन दूसरी मान्यता यह है कि नाथ परम्परा में आदिनाथ के वाद सवसे प्रथम आचार्य मत्स्येन्द्रनाथ ही हैं। आदिनाथ तो शिव का ही नामान्तर है व मानव गुरुओं में मत्स्येन्द्रनाथ ही इस परम्परा के सर्वप्रथम आचार्य हैं। ये गोरखनाथ के गुरु थे। नेपाली अनुश्रुति के अनुसार ये अवलोकितेश्वर के अवतार थे। नाथ परम्परा के ये आदि गुरु माने जाते हैं और कोलाचार के सिद्ध पुरुष है।[1] 'योगी सम्प्रदायाविष्कृति' के अनुसार भी आदिनाथ के वाद मत्स्येन्द्रनाथ और मत्स्येन्द्रनाथ के बाद गोरक्षनाथ आते हैं।

लेकिन नौनाथ और चौरासी सिद्धों की अनेक सूचियाँ मिलती हैं, जिनमे और भी अधिक नाथ सिद्धों के नाम मिलते हैं। डॉ० हजारीप्रसाद

---

वताये गये हैं- नित्यसिद्ध, अचानक सिद्ध, स्वप्न सिद्ध, दैवसिद्ध, कृपासिद्ध और हस्तसिद्ध। 'रसयोग सागर' में इनकी संख्या ३२ दी गई है जिसमें गोरखनाथ और मत्स्येन्द्रनाथ के नाम भी हैं। नाथ पंथ में ८४ सिद्ध गिनाये जाते हैं। इसी प्रकार वज्रयान सम्प्रदाय में भी ८४ सिद्धों के नाम मिलते है।

-भारतीय सस्कृति कोश, लीलाधर शर्मा पर्वतीय, पृ० ६६३-६६४

-गोरक्ष सहिता, हठयोग प्रदीपिका में ८ सिद्धियाँ गिनाई गई हैं- अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्य, प्रकाम्य, ईशत्व, वशीत्व। इनके नामों में अन्तर भी मिलता है। जैसे इसी कोश के पृ० २५ पर दी गई सूची में आठ सिद्धियाँ है-

-अणिमा, महिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशीत्व, कामावसायिता। अणिमा अणु व सूक्ष्म भाग को कहते है। देवता सिद्ध आदि इसी के प्रभाव से सूक्ष्म रूप धारण कर लेते है और इन्हें कोई देख नहीं सकता।

१. नाथ-सम्प्रदाय, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० ३८।

द्विवेदी ने 'वर्ण-रत्नाकर', 'महार्णव-तंत्र', 'हठयोग-प्रदीपिका', 'गोरक्ष-सिद्धान्त संग्रह', 'योगी संप्रदायाविष्कृति', 'सुधाकर चन्द्रिका' और 'ज्ञानेश्वर चरित्र' ग्रन्थों के आधार पर १३७ नामों की सूची दी है और यह भी लिखा है कि इस सूची में कुछ नाम अभिन्न से जान पड़ते हैं। फिर भी इन सिद्धों में सवा सौ (१२५) के करीब ऐतिहासिक व्यक्ति अवश्य हैं और वे तेरहवीं ईसवी सन् की समाप्ति के पूर्व के ही हैं। इनमें आदिनाथ, गोरक्षनाथ, जालंधरनाथ आदि कुछ नाम तो उपरोक्त सभी ग्रन्थों में पाये जाते हैं। संप्रदाय-प्रवर्तक सिद्धों में कुछ तो पुराने हैं, कुछ नये हैं और कुछ ऐसे भी हैं जिनका मूल नाम विकृत होकर कुछ का कुछ हो गया है।[1]

इन नामों के अतिरिक्त भी और बहुत से नाथ सिद्धों के नाम मिलते हैं जो गोरक्षनाथ से बहुत पहले हो गये हैं, जैसे "चाँदनाथ कपिलानी शाखा" में नीमनाथ (नेमिनाथ), पारसनाथ भी हैं जो दोनों जैन हैं और जिनका समय गोरक्षनाथ से बहुत पहले है। इसका कारण द्विवेदी जी ने यह बताया है कि बहुत से लोग जो गोरक्षनाथ के पूर्ववर्ती थे, बाद में उन्हें गोरखनाथी माना जाने लगा। धीरे-धीरे जब परम्पराएँ लुप्त होने लगीं तो उन पुराने संप्रदायों के मूल प्रवर्तकों को भी गोरक्षनाथ का शिष्य समझा जाने लगा।[2]

गोरक्षनाथ की प्रभाव-भूमि बहुत विशद थी। अनेक योगमार्गी शाक्त, बौद्ध, जैन आदि पर उनका प्रभाव पड़ा। अनेक सम्प्रदायों ने आश्रय पाने को इनसे नाम जोड़ दिया और इस प्रकार नाथ सम्प्रदाय का एक विराट रूप हो गया। सांख्य प्रवर्तक कपिल मुनी का कपिलानी सम्प्रदाय जो भागवत में भी पाया जाता है, वह भी योग साधना के माध्यम के कारण गोरखनाथ के साथ आकर जुड़ गया। रावल शाखा में मुसलमान जोगी हैं, वे अपने असली स्वरूप में लकुलीश पाशुपत रहे होंगे।[3]

---

१. नाथ-संप्रदाय, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० ३६-३७।
२ नाथ-सम्प्रदाय, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० १४७-१५०।
३ गोरखनाथ और उनका युग, डॉ० रांगेय राघव, पृ० २४१-२४३।

गोरखनाथ अपने काल के इतने प्रसिद्ध महापुरुष हुए थे कि उनका नाम अपने पंथ के पुरोभाग में रखे बिना उन दिनों किसी को गौरव मिलना संभव नहीं था।[1] इसीलिए अनेक परवर्ती सम्प्रदायों के प्रवर्तकों ने भी गोरखनाथ से ही प्रेरणा प्राप्त करने की बात स्वीकारी है और उनसे साक्षात्कार करने तक की बात भी कही है।

'महन्त दिग्विजय नाथ स्मृति-ग्रन्थ' में लिखा है कि विश्नोई सम्प्रदाय के प्रवर्तक जम्भनाथ को स्वयं गुरु गोरखनाथ ने स्वप्न में दर्शन देकर दीक्षित किया था। हरिदास निरंजनी ने स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया है कि गोरखनाथ मेरे गुरु थे। जसनाथी सम्प्रदाय के प्रवर्तक जसनाथजी की भेंट भी गुरु गोरखनाथ से हुई थी।[2]

'प्राण संगली' नामक सिक्ख ग्रन्थ में गुरु नानक के साथ ८४ (चौरासी) सिद्धों के साक्षात्कार का प्रसंग है। इन चौरासी सिद्धों में कई प्रकार के सिद्ध थे- कुछ सुरति सिद्ध थे, कुछ निरति सिद्ध और कुछ कनक सिद्ध।[3]

इसे एक विडम्बना ही कहा जा सकता है कि जब गोरखनाथ से लगभग डेढ़ सहस्राब्दी पूर्व होने वाले महावीर-स्वामी व गौतमबुद्ध के आविर्भाव का समय एवं उनके जन्म स्थान आदि प्रायः सुनिश्चित से हैं तब भारतवर्ष के महान गुरु गोरखनाथ के जन्म-स्थान, जन्म-समय व निर्वाण-काल आदि सभी अनिश्चित हैं। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में शंकराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली और इतना महिमान्वित महापुरुष भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ। भक्ति आन्दोलन के पूर्व सबसे शक्तिशाली धार्मिक आन्दोलन गोरखनाथ का योग-मार्ग ही था। गोरखनाथ अपने युग के

---

१. नाथ-सम्प्रदाय, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० १६३।
२. महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति-ग्रन्थ, प्रका० महन्त अवेद्यनाथ, गोरखपुर, पृ० २६७-२६८।
३. नाथ-सम्प्रदाय, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० ३६-३७।

सबसे बड़े नेता थे। उन्होंने जिस धातु को छुआ वही सोना हो गया दुर्भाग्यवश इस महान धर्मगुरु के विषय में ऐतिहासिक कही जाने लायक बातें बहुत कम रह गई हैं।[1]

यद्यपि गोरक्षनाथ एक इतिहास-पुरुष हैं लेकिन उनके परवर्ती भक्तों और अनुयायियों आदि ने उनको अधिकाधिक महिमा-मण्डित करने के लिए अपनी-अपनी रुचि के अनुसार विविध प्रकार की इतनी काल्पनिक बातें जोड़ दी हैं कि उनका इतिहास-पक्ष बहुत धूमिल हो गया है। वे अमर भी माने जाते हैं और उनकी विद्यमानता चारों युगों में दिखलाई जाती है।

विलियम क्रुक्स ने एक परम्परा का उल्लेख किया है जिसे ग्रियर्सन ने भी उद्धृत किया है। इस परम्परा के अनुसार गोरक्षनाथ सतयुग में पंजाब के पेशावर में, त्रेता में गोरखपुर में, द्वापर में द्वारिका से भी आगे हुरमुज मे और कलिकाल में काठियावाड़ की गोरखमढ़ी में प्रादुर्भूत हुए थे।[2] 'महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति-ग्रन्थ' में श्री गोरक्षनाथ मन्दिर, गोरखपुर का परिचय देते हुए श्री राधेश्याम तिवारी ने लिखा है कि भगवान गोरखनाथ चारों युगो मे सर्वत्र विराजमान हैं। आदि युग में उनकी साधना स्थली गोरखटीला (पंजाब) में थी, त्रेतायुग में गोरखपुर स्थित श्री गोरख-मन्दिर इनका साधना पीठ था, द्वापर में जूनागढ़ राज्य स्थित प्रभासपत्तन और कलियुग में पेशावर स्थित गोरखमढ़ी उनकी साधना स्थली है।[3] फिर आगे लिखते है कि तेरहवीं शताब्दी में अल्लाउद्दीन खिलजी द्वारा यह (गोरखपुर) न्दिर ध्वस्त कर दिया गया था किन्तु श्री गोरक्षनाथ जी द्वारा त्रेता में लाई गई अखण्ड ज्योति आज भी अनवरत रूप से जल रही है और त्रेता ग से ही धूने में गोरक्षनाथ जी द्वारा प्रज्वलित अग्नि विद्यमान है।[4]

---

नाथ-सम्प्रदाय, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० ९६।

नाथ-सम्प्रदाय, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० ९८-९७।

लेकिन यदि गोरखनाथ अमर है तो उनके बार-बार जन्म लेने की अपेक्षा ही नहीं रह जाती।

महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति-ग्रन्थ, पृ० १८१-१८३।

डॉ० रांगेय राघव ने भी अपने शोध-प्रबन्ध 'गोरखनाथ और उनका युग' में पृ० २८ पर लिखा है कि गोरखनाथ का सबसे पुराना मन्दिर अल्लाउद्दीन ने ढहाया था। कहा जाता है कि यह मन्दिर बहुत पुराना था। यहाँ तक कि उसके शिवजी के द्वारा त्रेता युग में बनाये जाने की बात भी कही जाती है। अल्लाउद्दीन का राजत्व काल १३५३-१३७३ ई० है (वस्तुतः अल्लाउद्दीन का राज्य समय १२६६-१३१६ ई० है)।

लेकिन सोचने की बात है कि यदि इस मन्दिर का निर्माण शिवजी द्वारा किया गया होता तो वे अपने द्वारा बनाये गये मन्दिर की रक्षा भी कर सकते थे। जब मन्दिर ध्वस्त हो गया तो त्रेतायुग में जलाई गई अखण्ड ज्योति आज भी कैसे जलती रह सकती है? लेकिन तथ्य और प्रमाण की बजाय जब भावावेश में आस्था, श्रद्धा और कल्पना से ही काम लिया जाता है तब कुछ भी लिखा जा सकता है।

'योगी सम्प्रदायाविष्कृति' में गोरखनाथ को गोदावरी तीर पर किसी चन्द्रगिरि में उत्पन्न बताया जाता है। बंगाल में यह विश्वास किया जाता है कि गोरखनाथ उसी प्रदेश में उत्पन्न हुए थे। ब्रिग्स का अनुमान है कि ये पंजाब के निवासी रहे होंगे। ग्रियर्सन ने अन्दाज लगाया है कि ये पश्चिम हिमालय में रहने वाले थे।[1] डॉ० रांगेय राघव ने लिखा है कि गोरक्षनाथ का जन्म स्थान पेशावर का उत्तर-पश्चिमी पंजाब था।[2]

इसी प्रकार गोरक्षनाथ के जन्म-समय के विषय में भी अलग-अलग मत हैं। 'प्रबन्ध चिन्तामणि' के अनुसार यह ९६८ संवत् के लगभग है। बंगाल के शैव-बौद्ध परम्परा की जाँच के अनुसार ब्रिग्स इनका समय १२०० ई० के पूर्व ही निश्चित करते हैं, बल्कि १०० वर्ष पूर्व अर्थात् ११०० ई० के लगभग। नेपाल के बौद्ध-शैव परम्पराओं से आपने इस समय

---

१. नाथ-संप्रदाय, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० ९६-९७।
२. गोरखनाथ और उनका युग, डॉ० रांगेय राघव, पृ० ४३।

को ७वीं, ८वीं, शती तक भी खींचा है। १२८७ में सोमनाथ के मन्दिर में गोरक्ष पर लेख अंकित होने से आप उन्हें १०० वर्ष पुराना मानते हैं।[1]

डॉ० मोहनसिंह ने गोरक्ष का समय ११वीं शताब्दी और राहुल सांकृत्यायन ने गोरक्षपा का समय ८४५ ई० दिया है। डॉ० सहीदुल्ला के अनुसार गोरक्ष का समय ८वीं शताब्दी है। महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति-ग्रन्थ में परशुराम चतुर्वेदी ने पृ० २६५ पर लिखा है कि न्यूनाधिक विश्वसनीय सामग्री के आधार पर इनका आविर्भाव काल ईसा की ८वीं, ९वीं, शती से पहले नहीं जाता दीखता। इस प्रकार गोरक्ष ५०० ई०, ७०० ई० तथा परवर्ती काल में भी मिलते हैं। गोरक्ष का समय इस प्रकार ६०० ई० और ११०० ई० के मध्यकाल में पड़ता है।[2]

डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपने ग्रन्थ 'नाथ-संप्रदाय' में काफी जॉच पड़ताल के बाद पृ० ९६ पर गोरखनाथ का समय विक्रम की १०वीं शताब्दी निश्चित किया है लेकिन फिर पृ० १०२ पर डॉ० बड़थ्वाल के मत को भी उद्धृत किया है, 'मैं अधिक संभव समझता हूँ कि गोरखनाथ विक्रम की ११वीं शताब्दी में हुए।' इस प्रकार उनका सुनिश्चित समय अभी तक तय नहीं हो पाया है।

यह आश्चर्य की ही बात है कि नाथ-सम्प्रदाय अथवा गोरक्षनाथ पर शोध-कार्य करने वाले देशी-विदेशी विद्वानों में से किसी का भी ध्यान नोहर (वर्तमान, जिला हनुमानगढ़, राज०) के नाथ मठ में लगे शिलालेख की ओर

---

१. सोमनाथ मन्दिर के १२८७ का लेख अंकित होने की जो बात लिखी गई है उसके सम्बन्ध में और कोई भी जानकारी नहीं दी गई हैं जिससे स्थिति कुछ स्पष्ट हो सके। वैसे सोमनाथ का मूल मन्दिर तो महमूद गजनवी ने बहुत पहले ही ध्वस्त कर दिया था। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भी इस लेख का उल्लेख तो किया है किन्तु इससे उनके जन्म स्थान आदि पर कोई निश्चित प्रकाश नहीं पडता। - गोरखनाथ और उनका युग, डॉ० रांगेय राघव, पृ० २६।

२. गोरखनाथ और उनका युग, डॉ० रांगेय राघव, पृ० २८-२६।

नहीं गया जिसके आधार पर गोरक्षनाथ का समय निश्चित करने में मदद मिल सकती थी। महमूद गजनवी के द्वारा सोमनाथ मन्दिर के विध्वंस के २० वर्ष बाद ही इस मठ की नींव रख दी गई थी। इस लेख के अनुसार सं० ११०२ (३) के वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की २ (१०४५ ई०) को इसकी आधारशिला रख दी गई थी और सं० ११३५ (वि०) के कार्तिक वदि २ (बुधवार, सितम्बर २६, १०७८ ई०) को इसका निर्माण कार्य पूरा हो गया था।[1]

---

१. इस शिलालेख की छाप एवं पाठ चूरू मण्डल के शोध पूर्ण इतिहास के पृ० ३८६ पर छपा है।

चूरू नाथाश्रम के वर्तमान मठाधीश देवीनाथजी के अनुसार यह मठ गोरखपंथ की रामनाथी शाखा का है।

*गोरखनाथ से साक्षात्कार करने वालों की सूची में डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी एवं* डॉ० रांगेय राघव ने जो नाम दिए हैं उनमें गोगाजी का नाम भी है। ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर गोगाजी महमूद गजनवी के समकालीन ठहरते हैं। इतिहासकार जेम्स टाड की मान्यता है कि गोगाजी महमूद गजनवी का सामना करते हुए अपने बहुत से परिवार जनों के साथ मारे गये थे। क्यामखां रासा के अनुसार गोगाजी से कोई दस पीढ़ी बाद होने वाले मण्डलेश्वर गोपाल के पुत्र राणा जैतसी के समय का एक शिलालेख सं० १२७३ वि० माघ सुदी १४ चन्द्रवार (सोमवार, जनवरी २३, १२१७ ई०) का अभी भी ददरेवा (त० राजगढ जिला चूरू) की गोगामेड़ी में रखा है और यही ददरेवा कभी चौहान राणा गोगा की राजधानी रहा था। इस शिलालेख के अनुसार काल-गणना करने पर भी गोगाजी महमूद गजनवी के समकालीन ठहरते हैं। डॉ० सत्यकेतु विद्यालकार एवं डॉ० दशरथ शर्मा ने भी डी० लिट्० के अपने शोध-प्रबन्ध में इस बात को स्वीकार किया है कि गोगाजी महमूद गजनवी के समकालीन थे और चूंकि सोमनाथ के आक्रमण के लिए जाते हुए महमूद गजनवी राजस्थान से होकर गुजरा था। अतः सम्भव है कि गोगाजी महमूद गजनवी का प्रतिरोध करते हुए यहीं काम आये हों जहाँ से थोड़ी दूरी पर ही यह नाथमठ है और नोहर के पास ही गोगामेड़ी में गोगाजी की समाधि है जहाँ आज भी भादों के महीने में हर वर्ष बड़ा मेला लगता है (विशेष जानकारी के लिए चूरू मण्डल का शोध पूर्ण इतिहास द्रष्टव्य है)। इसलिए यदि गोरखनाथ का समय १०वीं ११वीं शती ई० मानें तो गोगा और गोरखनाथ के साक्षात्कार की बात सत्य हो सकती है। अतः इस बात की भी संभावना है कि गोगाजी ने नोहर (गोगामेड़ी) के पास महमूद गजनवी का मार्ग रोका होगा। गोगामेड़ी से थोड़ी दूरी पर गोरख टीला है।

- अस्तु।

# योग–साधना

भारतीय धर्म-साधना में योग-मार्ग के उन्नायक महायोगी गोरखनाथ का व्यक्तित्व अप्रतिम है। गोरखनाथ ने जिस योग-मार्ग का संघटन किया था उसे नाथ-योग कहते हैं।[1]

यह सर्वविदित है कि गोरक्ष अथवा लोक-प्रसिद्ध गोरखनाथ का व्यक्तित्व सर्वाधिक प्रभावशाली था। योग का उद्देश्य जैसा कि पतंजलि कहते हैं- चित्तवृति निरोध है। गोरक्ष या अन्य किसी नाथ ने कोई अन्य लक्ष्य नहीं रखा। उनकी समस्त साधना का लक्ष्य मोक्ष, अविद्या से छुटकारा तथा आत्मा द्वारा अपने सच्चे स्वरूप को प्राप्त करना था। वे यह जानते थे कि योगाभ्यास की तीनों उच्चतम स्थितियों - धारणा, ध्यान और समाधि को पार कर जाने पर ही आत्मोपलब्धि हो सकती है। ये केवल मानसिक स्थितियाँ हैं और अन्ततः यह मन ही है जिसे वश में करना होता है। उन्होंने पतंजलि द्वारा निरूपित साधना प्रणाली की आत्यंतिक सत्यता को समझ लिया था।[2]

गोरखनाथ के नाम पर जितने भी ग्रन्थ पाये जाते हैं वे प्रायः सभी साधना-ग्रन्थ हैं। उनमें साधना के लिए उपयोगी, व्यावहारिक तथ्यों का भी संकलन है। गोरक्षनाथ के पहले भी योग की बड़ी ज़बरदस्त परम्परा थी जो ब्राह्मणों और बौद्धों में समान रूप से मान्य थी। 'गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह' में प्रायः सभी मुख्य-मुख्य योगोपनिषदों के वाक्य प्रमाण रूप से उद्धृत किये गये हैं। *ग्रन्थ के आरम्भ में ही गुरु की महिमा बताई गई है।* गुरु ही समस्त श्रेयों का मूल है। एक मात्र अवधूत ही गुरु हो सकता है जिसके एक हाथ में त्याग है और दूसरे में भोग है और फिर भी जो त्याग और

---

१. डॉ० भगवतीप्रसादसिंह, सम्पादक -गोरख दर्शन, पृ० ३।
२. अक्षयकुमार बनर्जी द्वारा लिखित 'गोरख दर्शन' पुस्तक में राजस्थान के तत्कालीन राज्यपाल (डॉ० सम्पूर्णानन्द) द्वारा १६ जून, १६६३ ई० को लिखित पुस्तक के आमुख से।

भोग-दोनों से अलिप्त है। 'सूत संहिता' में कहा गया है कि वह वर्णाश्रम से परे है। समस्त गुरुओं का साक्षात् गुरु है। इस प्रकार के पक्षपात विनिर्मुक्त मुनीश्वर को ही अवधूत कहा जा सकता है। उसे ही नाथ पद प्राप्त हो सकता है।[1]

मुक्ति क्या है? मुक्ति वस्तुतः नाथ स्वरूप में अवस्थान है। 'गोरक्ष उपनिषद' में कहा गया है- अद्वैत के ऊपर सदानन्द देवता है। अर्थात् सदानन्द वाली अवस्था अद्वैत के ऊपर है। इस मत के अनुसार शक्ति सृष्टि करती है, शिव पालन करते हैं, काल संहार करते हैं और नाथ मुक्ति देते हैं। नाथ ही एक मात्र शुद्ध आत्मा है।[2]

रांगेयराघव भी अपने शोध प्रबन्ध में कहते हैं- उस समय योग माध्यम का प्रचलन अनेक पंथों और मतों में था।[3]

गोरक्षनाथ की लिखी हुई कही जाने वाली २८ संस्कृत पुस्तकों की सूची डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने दी है लेकिन उन्होंने यह भी लिखा है कि इन पुस्तकों में अधिकांश के कर्ता स्वयं गोरखनाथ नहीं थे। साधारणतः उनके उपदेशों को नये-नये रूप में वचनबद्ध किया गया है। इन पुस्तकों के अतिरिक्त हिन्दी में भी गोरखनाथ की कई पुस्तकें पाई जाती हैं। इनका सम्पादन डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने किया है। इसका एक भाग 'गोरखवाणी' नाम से 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' से प्रकाशित हो चुका है। हिन्दी में गोरखनाथ के नाम से अनेक पद और सबदी आदि प्रचलित हैं, उनमें भी साधना-मार्ग की व्याख्या की गई है और उनमें योगियों के धार्मिक-विश्वास, दार्शनिक मत और नैतिक स्वर का परिचय अधिक स्पष्ट भाषा में मिलता है। इन सबको जन-जन तक पहुँचाने की दृष्टि से इन हिन्दी रचनाओं का विशेष महत्व है। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी व डॉ० रांगेयराघव

१. नाथ-संप्रदाय, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० १३२-१३४।
२. नाथ-संप्रदाय, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० १३६।
३. गोरखनाथ और उनका युग, डॉ० रांगेयराघव, पृ० ५८।

ने इन सबदियों आदि के उद्धरण अपने ग्रन्थों में दिए हैं। इनमें से कुछ यहाँ उद्धृत किये जा रहे हैं।

गोरखनाथ की मान्यता थी कि गुरु के विना योग का कोई कार्य नहीं सधता अतएव गुरु की नितान्त आवश्यकता है। इस मार्ग में निगुरे की कोई गति नहीं है।

गुरु कीजै गहिला, निगुरा न रहिला।
गुरु बिन ग्यांन न पाइला रे भाईला।।

लेकिन योग की साधना के लिए वे किताबी ज्ञान को आवश्यक नहीं समझते थे। तभी उन्होंने कहा है-

पढ़्या गुण्या सूवा बिलाई खाया।
पंडित के हाथ रह गई पोथी।।

पोथी-पंडित तो छाछ ही पीते है और सार रूपी मक्खन तो सिद्ध पुरुष ही खाते हैं-

गिगनि मंडल में गाय बियाई, कागद दही जमाया।
छांछि छांणि पिंडता पीवी, सिधां माषण खाया।।

इसलिए योगी बड़ी विकट साधना करता है। उसका मन यदि थोड़ा भी प्रलोभनों से अभिभूत हुआ तो उसका पतन निश्चित है-

नौ लख पातरि आगे नाचैं पीछैं सहज अपाड़ा।
ऐसे मन लै जोगी पेलै तब अन्तरि बसै भंडारा।।

गोरखनाथ ने इन्द्रिय-निग्रह और वाक्संयम पर अधिक जोर दिया है और इनसे विपरीत आचरण वालों की भर्त्सना की है-

यंद्री का लड़वड़ा, जिभ्या का फूहड़ा।
गोरख कहै, ते परतपि चूहड़ा।।
काछ का जती मुख का सती।
सो सत पुरुप उतमो कथी।।'[1]

गोरखनाथ ने परनिन्दा और मांस व नशीले पदार्थों को निंद्य कहा है-

जोगी होई पर निंदूया झपै। मद मांस अरु भांगि जो भपै।
इकोतर सै पुरिपां नरकहिं जाई। सति सति भापंत श्री गोरखराई।

योगी जल्दवाजी करके सिद्धि नहीं पा सकता है। उसे सोच समझकर वोलना चाहिए। उसे गर्व नहीं करना चाहिए तथा उसका स्वभाव सहज होना चाहिए-

हवकि न वोलिवा ठवकि न चलिवा धीरैं धरिवा पावं।
गरव न करिवा सहज रहिवा भणत गोरख रावं।

गुरु ने मध्यम-मार्ग का उपदेश दिया। खाने पर टूट न पड़ना, विन खाये भी न रहना, दिन-रात अन्तर की ब्रह्मअग्नि का रहस्य चिन्तन करना, किसी वात पर आग्रह न रखना, एकदम निकम्मा भी न हो-जाना-- ऐसा ही गोरखनाथ कह गये हैं-

---

१. डॉ० रागेयराघव का कथन है कि यह भापा गोरखनाथ के युग की नहीं है। हस्त लिखित प्रतियाँ १७वीं या १८वीं शती की लिखी हुई हैं। इससे पुरानी नहीं मिलती परन्तु यह याद रखना आवश्यक है कि शिष्यों ने गुरु-वचनों को अत्यन्त सहेज कर रखने का प्रयत्न किया है, पृ० १४३।
-जैन साहित्य के खोजी विद्वान स्व० अगरचन्द नाहटा ने सं० १४९९ में तपागच्छीय जैन विद्वान शुभशील रचित वड़े ग्रन्थ से गोरखनाथ के चार पद उद्धृत किये हैं-
अतिहि गहना अतिह अपारां संसार सायर खारा।
वुज्झउ वुजूउ गोरख वोलई सारा धम्म विचारा।। आदि
योगवाणी 'गोरख' विशेपांक, जनवरी १९७७, पृ० ८६-८७।

धाये न पाइवा भूपे न मरिवा,
अह निसि लेया ब्रह्म अगनि का भेवं।
हट न करिया पड़्या न रहिवा,
यूं बोल्यो गोरप देवं।।

गोरख ने स्वांगधारी पाखण्डियों की भर्त्सना भी की है-

साग का पूरा ग्यान का ऊरा, पेट का तूटा डिंभ का सूरा।
बदंत गोरषनाथ न पाया जोग, करि पायंड रिझाया लोग।[1]

## कर्ण–कुण्डल और वेशभूषा

सामान्य तौर पर यह माना जाता है कि गोरखनाथ ने ही नाथपंथ में दीक्षा लेने वालों के लिए कान चिरवाकर उनमें मुद्रा (कुण्डल) पहनने की एक विशिष्ट परम्परा चलाई थी ताकि गोरखपंथी नाथों की अपनी अलग पहचान रहे और वे सहजता से पुनः गृहस्थ में न जा सकें। लेकिन इसके अलावा अन्य मान्यताएँ भी है। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी लिखते हैं कि यह मुद्रा गोरखनाथी योगियो का चिह्न है। गोरखपंथ में इसके अनेक

१. लेकिन गोरखनाथ ने चाहे जो भी कहा हो, पंथ में ऐसे लोग भी मिल जायेंगे जिन्हें गोरखनाथ की योग-साधना अथवा साधुओं द्वारा पालनीय आचार-सदाचार के सन्दर्भ में उनके द्वारा दिये गये उपदेशों से कोई सरोकार नहीं। कदाचित् नशे और कदाचार में फँसे लोग भी मिल जायेंगे। ऐसे उदाहरण भी मिल सकते हैं जहॉं योगाचार पर भौतिकवाद हावी होता लगता है।
डॉ० रागेय राघव ने अपने शोध-प्रबन्ध 'गोरखनाथ और उनका युग' में नाथ पथियों के स्थानों आदि का विवरण देते हुए यह भी लिखा है कि "बनारस की लाट उनके हाथ से बिक चुकी है क्योंकि एक महन्त मालिन के प्रेम में पड़कर जुआरी हो गया था।" पृ० २५४
चन्द्रनाथ योगी ने अत्यन्त खेद के साथ योगियों के पतन के विषय में लिखा है। डॉ० रागेय राघव, 'गोरखनाथ और उनका युग', पृ० २५५।
लेकिन सच तो यह है कि किसी भी सम्प्रदाय के प्रवर्तकाचार्य को अपने बाद अपने अनुयायियों के कृत्यों के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। उनका प्रभाव है कि वे भारतीय-चिन्तन में जीवित हैं, डॉ० रागेय राघव 'गोरखनाथ और उनका युग' पृ० २५५।

आध्यात्मिक अर्थ भी बताये जाते हैं और इन्हें साक्षात् कल्याण-दायिनी मुद्रा माना जाता है। मुद्रा धारण करने के लिए कान का फाड़ना आवश्यक है और यह कार्य छुरी या क्षुरिका से ही होता है, इसलिए क्षुरिकोपनिषद में क्षुरिका माहात्म्य वर्णित है-

क्षुरिकां संप्रवक्ष्यामि धारणं गसिद्धये।
संप्राप्य न पुनर्जन्म योग युक्तः प्रजायते।[1]

यद्यपि यह विश्वास किया जाता है कि मत्स्येन्द्रनाथ ने या गोरक्षनाथ ने ही कर्ण-कुण्डल धारण करने की प्रथा चलाई थी लेकिन कर्ण-कुण्डल कोई नई बात नहीं है। इस प्रकार के प्राचीन प्रमाण मिलते हैं कि कर्ण-कुण्डलधारी शिव मूर्तियाँ बहुत प्राचीन काल में भी बनती थीं। ब्रिग्स ने लिखा है कि सालसेटी, एलोरा व एलिफेंटा की गुफाओं में जो आठवीं शताब्दी की हैं, शिव की अनेक ऐसी योगीमूर्तियाँ हैं जिनके कानो में वैसे ही बड़े-बड़े कुण्डल हैं जैसे कनफटे योगियों के होते हैं और उनको कानों में उसी ढंग से पहनाया भी गया है। इसके अतिरिक्त मद्रास के उत्तरी आर्कट जिले में परशुरामेश्वर का जो मन्दिर है उसके भीतर स्थापित लिंग पर शिव की एक मूर्ति है जिसके कानों में कनफटा योगियों जैसे कुण्डल हैं। इन सब बातों को देखते हुए यह अनुमान करना असंगत नहीं कि मत्स्येन्द्रनाथ के पहले भी कर्ण-कुण्डलधारी मूर्तियाँ हुआ करती थीं। यह भी कहा जाता है कि शिवजी ने ही अपना वेश ज्यों का त्यों मत्स्येन्द्रनाथ को दिया था, अस्तु।[2]

ये कुण्डल हरिण के सींग, मिट्टी, हाथी-दाँत, सोना या स्फटिक आदि के भी होते हैं। गोरख पंथ की १२ शाखाओं में से एक शाखा का नाम वैराग-पंथ (वैराग्य-पंथ) भी है जिसके प्रवर्तक भरथरीनाथ (भर्तृनाथ)

१. नाथ-संप्रदाय, पृ० ७-८।
२. नाथ-संप्रदाय, पृ० ८-९।

माने जाते हैं। योगी वनने से पूर्व ये राजा और संस्कृत के उत्कृष्ट कवि भर्तृहरि थे, जिनके द्वारा संस्कृत भाषा (पद्य) में रचित तीन शतक (शृंगारशतक, नीतिशतक और वैराग्यशतक) आज भी लोकप्रिय हैं। वे गोपीचन्द (वाद में गोपीचन्दनाथ) के मामा वतलाये जाते हैं। भर्तृहरि द्वारा रचित वैराग्य शतक के एक श्लोक (सं० १००) से तत्कालीन योगियों की वेशभूषा एवं उनके क्रिया कलापों की एक झलक मिलती है :

कौपीनं शतखण्डजर्जरतरं कन्था पुनस्तादृशी,
निश्चिन्तं सुखसाध्यभैक्ष्यमशनं शय्या श्मशाने वने।
मित्रामित्रसमानताऽतिविमला चिन्ताऽथ शून्यालये,
ध्वस्ताशेप मदप्रमादमुदितो योगीचिरं तिष्ठति।। १००।।[1]

इस श्लोक का अनुवाद पुरोहित गोपीनाथ जी ने हिन्दी एवं अंग्रेजी में क्रमशः इस प्रकार किया है:

शतशः खण्ड से जर्जरित कौपीन और ऐसी ही कंथा, चिन्ता रहित और सुख-साध्य भिक्षा के भोजन, श्मशान अथवा वन का शयन, मित्र और

१. वैराग्य शतकम्, पृ० ३१६।
पुरोहित गोपीनाथ एम० ए० जो आवू में जयपुर राज्य के वकील थे, ने भर्तृहरि के तीनों शतकों का अनुवाद हिन्दी और अंग्रेजी में किया था जो चूरू के खेमराज श्रीकृष्णदास द्वारा स्थापित श्री वेंकटेश्वर यंत्रालय, वम्बई से सन् १८९६ ई० में प्रकाशित हुआ था। इस ग्रन्थ में पु० गोपीनाथजी ने भर्तृहरि एव उनके द्वारा रचित शतकों के बारे में अनेक प्रकार की उपयोगी जानकारियाँ दी हैं। ग्रन्थ के अनुसार किसी यूरोपीय भाषा में भर्तृहरि के नीतिशतक एवं वैराग्यशतक का अनुवाद सर्वप्रथम ईसाई मिशनरी अब्राहम रोजर (Abraham Roger) ने डच भाषा में किया था जो सन् १६५१ ई० में प्रकाशित हुआ था। वैराग्यशतक को तो अब्राहम रोजर ने 'स्वर्ग को ले जाने वाला मार्ग' (The road which leads to heaven) के नाम से अभिहित किया था। फिर सन् १६७० ई० में इसका अनुवाद फ्रेंच-भाषा में हुआ था और इसके वाद ये दोनों शतक ग्रीक भाषा में भी अनूदित हुए (अनुवादक -Haeberlin M Galanos)। इसके वाद तो देशी और विदेशी विद्वानों ने इन दोनों शतकों पर भिन्न-भिन्न भाषाओं में खूव लिखा है। इन सव वातों से इस ग्रन्थ का महत्व अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर भी स्वयं सिद्ध है। वैराग्य शतकम्, प्रिफेस, पृ० १७।

शत्रु में समभाव और निर्जन स्थान में परमात्मा के निर्मल ध्यान के प्रभाव से विनष्ट हुए मद-मोहादि के कारण प्रसन्न हुआ योगी निस्संदेह सुखी है।

The hermit or ascetic who wears pieces of thread bare rags over his privities and body, lives a careless life upon the alms of others procured with ease, sleeps in the midst of a cemetery (Crematorium) or a forest, looks on his friends and foes with equal regard, abandons himself to the pure meditation of the Deity in a solitary place, and thus cheers himself with the thought of having destroyed all traces of vain conceit and arrogance, undoubtedly leads the happiest life. (P. 316)

कान न चिरवाने वालों को "औघड़" कहा जाता है और आज भी उनका दर्जा कान चिरवाने वालों से नीचा समझा जाता है। जायसी ने गोरखनाथी सिद्धों की वेशभूषा का वर्णन करते हुए नाथों की पहिचान बताने वाले अनेक चिह्नों का वर्णन किया है।[1]

मेखल, सिंघी, चक्र धंधारी। जोगबाट, रुदराछ अधारी।।
कंथा पहिरि दण्ड कर गहा। सिद्ध होइ कहँ गोरख कहा।।
मुद्रा स्रवन, कंठ जपमाला। कर उपदान कांध बघछाला।।
पाँवरि पाँव, दीन्ह सिर छाता। खप्पर लीन्ह भेस करि राता।।

जायसी ग्रन्थावली, पदमावत, जोगी खण्ड पृ० ५३।

लेकिन आजकल इनमें से बहुत से चिह्न अनिवार्य नहीं रहे हैं।

नाथयोगी जब घरों में झोली (भिक्षा) लाने जाते हैं तो पहले 'अलख' की आवाज लगाते हैं। वस्तुतः अलख का अर्थ जो दिखाई न पड़े (अलक्ष्य) होता है। दूसरे शब्दों में इसे अदृश्य अथवा अप्रत्यक्ष भी कह सकते हैं। निर्गुण साधकों ने परम-ब्रह्म के अनेक नामों में एक नाम 'अलख' भी दिया

---

१. चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास, पृ० ३८८।

है। उस अलक्ष्य ब्रह्म से साक्षात्कार करने वाले को ही श्रीगोरखनाथजी ने सच्चा योगी माना है- 'अलख लखे सो खरा जती।' अलख-जगाना एक मुहावरा है, जिसका अर्थ है पुकार कर परमात्मा का स्मरण करना व कराना।[1]

जब दो नाथयोगी परस्पर मिलते हैं तो परस्पर आदेश-आदेश कहते हैं। इस आदेश के सम्बन्ध में गोरखनाथ कहते हैं:-

"आत्मेति परमात्मेति जीवात्मेति विचारणे।
त्रयाणामैक्य सम्भूतिरादेश इति कीर्तितः।।"[2]

अपने प्रापंचिक विचार में हम आत्मा, परमात्मा और जीवात्मा में भेद करते हैं। तीनों का एकत्व ही सत्य है और इस सत्य का अनुभव या दर्शन ही आदेश कहलाता है। इसे ध्यान में रखते हुए ही जब कभी योगी एक दूसरे का अभिवादन करते हैं, तो वे आदेश-आदेश का उच्चारण करते हैं।

## गोरखनाथी शाखाएँ

नाथ पंथियों का मुख्य सम्प्रदाय गोरखनाथी योगियों का है जिसमें गोरखनाथ से पूर्ववर्ती, समसामयिक व परवर्ती नाथ सिद्धों की अनेक शाखाएँ भी अन्तर्भुक्त हो गई हैं। महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति-ग्रन्थ में पृ० ३०० पर लिखा है कि यदि नाथ सिद्धों की वाणियों के अन्तर्गत सग्रहीत "घौड़ाचौलीजी की शब्दी" को उसके रचनाकाल अर्थात् संभवतः चौदहवीं शती से पहले स्वीकार करलें तो यह कहा जा सकता है कि उनके समय तक कम से कम रावल, पागल, वनखण्डी, अगमागम, आई पंथी, पंक पंथ, धजे एवं गोपाल जैसे ६८ विभिन्न पंथों का संगठन हो चुका होगा तथा इन सभी का समावेश भी श्री गोरखनाथ पंथ के अन्तर्गत किया जाता होगा।

---

१. सरण मछदर गोरख बोले, मदनलाल शर्मा, पृ० ६६।
२. गोरखदर्शन, ले० अक्षय कुमार बनर्जी, प्रका० महन्त अवेद्यनाथ, दिग्विजयनाथ न्यास, गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर, द्वितीय संस्करण, १९८८ ई०, पृ० २७६।

डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपने ग्रन्थ 'नाथ-सम्प्रदाय' में नाथपंथ की इन शाखा-प्रशाखाओं के विषय में बड़े विस्तार से लिखा है जिसे यहाँ दोहराने की अपेक्षा नहीं है। वर्तमान में गोरखनाथी पंथ मुख्य रूप से १२ शाखाओ में विभक्त है और इन बारह शाखाओं के कारण ही इन्हें 'बारह पंथी योगी' कहा जाता है। प्रत्येक पंथ का एक विशेष 'स्थान' है जिसे ये लोग अपना पुण्य-क्षेत्र मानते हैं। प्रत्येक पंथ किसी पौराणिक देवता या महात्मा को अपना आदि प्रवर्तक मानता है। ये बारह शाखाएँ इस प्रकार हैं- (१) सत्यनाथी[1] (२) धर्मनाथी[2] (३) रामपंथ (४) नाटेश्वरी (५) कन्हड़ (६) कपिलानी (७) बैराग पंथ (८) माननाथी (९) आई पंथ (१०) पागल पंथ (११) धज पंथ (१२) गंगानाथी (नाथ-संप्रदाय, पृ० १०-११)।

एक परम्परा के आधार पर इनका जो विवरण दिया गया है उसके अनुसार सत्यनाथी शाखा के मूल प्रवर्तक सत्यनाथ हैं जो स्वयं ब्रह्मा का ही नाम है। धर्मनाथी शाखा के मूल प्रवर्तक धर्मराज (युधिष्ठिर), रामपंथ के मूल प्रवर्तक श्री रामचन्द्र, माननाथी शाखा के प्रवर्तक गोपीचन्द, धज पंथ के हनुमानजी और गंगानाथी के भीष्मपितामह, आदि, (वही, पृ० ११)[3]।

इससे तो यही लगता है कि इन बारह शाखाओं का प्रवर्तन किसी एक युग में न होकर अलग-अलग युगों में हुआ है, जैसे सत्यनाथी पंथ का प्रवर्तक सत्यनाथ को बतलाया गया है और सत्यनाथ स्वयं ब्रह्मा का ही नाम कहा गया है, अतः इस शाखा का प्रवर्तन सत्ययुग (सतयुग) में हुआ होगा। रामपंथ का प्रवर्तन त्रेता युग में, तो धर्मनाथी पंथ का द्वापर में और पागल पंथ का इस कलिकाल में। इस प्रकार इनके प्रवर्तन में समय का बड़ा भारी

---

१. अल्मोड़े में भैरव-पार्वती के अतिरिक्त बहुत बड़े कुण्डलवाली गोरक्ष की भी एक फुट की मूर्ति है। यह सतनाथी है। गोरखनाथ और उनका युग, पृ० २५४।
२. द्वाराहाट के निकट काम में धर्मनाथी पीर की गद्दी है। वही, पृ० २५४।
३. डॉ० रांगेयराघव ने अपने शोध प्रबन्ध के पृ० २४० पर इसी सारणी को उद्धृत किया।

अन्तर पड़ जाता है। यह बड़ी उलझन पैदा कर देता है, लेकिन द्विवेदीजी ने पृष्ठ १४ पर जो दूसरी परम्परा दी है उससे समस्या कुछ सुलझती दिखाई पड़ती है, जिसके अनुसार धर्मनाथी शाखा के प्रवर्तक द्वापर युग के धर्मराज युधिष्ठिर नहीं अपितु योगी संतनाथ के शिष्य धर्मनाथ हैं। इसी प्रकार संतोषनाथ के शिष्य रामनाथ हैं (त्रेता युग के श्रीरामचन्द्र नहीं)। गंगानाथी शाखा के प्रवर्तक द्वापर युग के भीष्म-पितामह नहीं अपितु सिद्ध गंगानाथ हैं।

## माननाथी शाखा

इस सूची में इन द्वादश पंथों में एक पंथ का नाम माननाथी लिखा है जिसके मूल प्रवर्तक गोपीचन्द और मुख्द स्थान जोधपुर का महामन्दिर बतलाया गया है। डॉ० रांगेयराघव ने भी अपने शोध-प्रबन्ध में ऐसा ही लिखा है। परशुराम चतुर्वेदी ने लिखा है कि माननाथी पंथ को पावनाथ पंथ भी कहा जाता है और इसका मुख्य स्थान जोधपुर का महामंदिर है।[1] लेकिन न तो माननाथी एवं पावनाथ-पंथ एक हैं और न जोधपुर का महामन्दिर माननाथियों का आदि स्थान है। जोधपुर के महामन्दिर का निर्माण तो आधुनिक युग में ही जोधपुर के महाराजा मानसिंह (सन् १८०३-४३ ई०) ने करवाया था जो नाथों के विशेषकर जालंधरनाथ[2] के परमभक्त थे।[3]

---

१. उत्तरी भारत की सन्त परम्परा पृ० ५६ (चूरू मण्डल के शोधपूर्ण इतिहास से उद्धृत)।

२. अभी पिलानी से प्रकाशित शोध-त्रैमासिकी 'मरुभारती' (अप्रेल, १६६६) में श्री अस्तअलीखां मलकांण का एक लेख छपा है, 'महाराजा मानसिंह और उनकी पदावली' (पृ० ३६-४६) जिसमें उन्होंने नाथों और सिद्धों के सम्बन्ध में महाराजा द्वारा रचे गये २१ 'ग्रन्थों' के नाम दिये हैं। उनमें तीन ग्रन्थ तो विशेष रूप से जालंधरनाथ से ही सम्बन्धित हैं-(१) जालंधरनाथजी रो चरित ग्रंथ (२) जलधर-चन्द्रोदय (३) जालंधरनाथजी री निसानी। शेष ग्रन्थों पर किसी नाथ का नाम नहीं है। इससे स्पष्ट है कि जालधरनाथजी ही महाराजा मानसिंह के परम आराध्य थे और उनके द्वारा बनवाया गया जोधपुर का यह महा मन्दिर जालंधरनाथियों का ही है, मन्नाथियों का आदि स्थान नहीं।

३. चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास। पृ० ३८७-३८८।

गोपीचन्द को माननाथी शाखा का मूल प्रवर्तक बतलाना भी समीचीन नहीं लगता। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने 'योगीसंप्रदायाविष्कृति' से मत्स्येन्द्रनाथ की जो शिष्य-परम्परा दी है उसके अनुसार गोपीचन्द गोरखनाथ की शिष्य परम्परा में न होकर जालंधरनाथ[1] की शिष्य परम्परा में है और मत्स्येन्द्रनाथ और जालंधरनाथ दोनों आदि नाथ के शिष्य हैं।[2] पृ० १५२ पर भी गोपीचन्द को 'पा पंथ' में जालंधरिपा के शिष्य कानिपा का शिष्य बतलाया गया है और यह भी लिखा है कि गोपीचन्द का ही नाम सिद्धसंगरी है। सपेरे इनको अपना गुरु मानते हैं।[3] पृ० १५४ पर शिव (आदिनाथ) से चलने वाली नाथ-सम्प्रदाय की परम्परा की जो सारणी दी गई है उसमें भी सिद्धसंगरी (सरपोलिया) को कान्हिपा का शिष्य बतलाया गया है और राजा रसालू→ माननाथ (?) लिखा है। कान्हुपा या कानपा (कृष्णपाद) ने स्वयं अपने को कापालिक कहा है और जालंधरपाद का शिष्य बतलाया है।[4]

---

१. जालंधरिनाथ (जालंधरिपाद) का ही दूसरा नाम हाडि या हाडिपा भी है। (नाथ-संप्रदाय, पृ० १६६)। श्री गोविन्द अग्रवाल का अनुमान है कि रतनगढ (चूरू) के निकट हुडेरा सिद्धान (जोगियान) में नाथों का मठ जो वीरान पड़ा है, वह संभवतः इसी हाडि या हाडिपा से सम्बन्धित है। इस क्षेत्र में 'पा' के स्थान पर 'रा' का प्रयोग मिलता है जैसे चाचेरा, वोगेरा आदि। संभव है इसीलिए हाडिपा के स्थान पर हाडिरा प्रचलित हो गया जो कालान्तर में हाडिरा से हुडेरा बन गया हो। यहाँ से जो एक पुराना प्रस्तर मूर्ति-फलक मिला है वह ईसा की ११वीं शताब्दी का अनुमानित है। फलक का चित्र चूरू मण्डल के शोधपूर्ण इतिहास में छपा हुआ है जिसे इस पुस्तक में भी दिया जा रहा है। इसमें नृत्य-मुद्रा में चार व्यक्ति दिखलाये गये हैं जिनके कानों में नाथ योगियों जैसे कुण्डल हैं। गोयेट्ज हरमन ने अपने ग्रन्थ 'दि आर्ट एण्ड आर्टिटेक्चर ऑफ बीकानेर स्टेट' में इस प्रस्तर-फलक का उल्लेख किया है।

इसी मठ से वि० सं० १३०६ की एक देवली राठौड नरहरिदास की मिली है जिससे भी इस मठ की प्राचीनता ज्ञात होती है। संभव है इस मठ के नाथ योगी कालान्तर में अन्यत्र चले गये हों और अब तो यह मठ निर्जन पड़ा है। (पूरी जानकारी के लिए चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास, द्रष्टव्य है)।

२. नाथ सम्प्रदाय, पृ० १४।

३. लेकिन माननाथ का सपेरों अथवा कालवेलियो से कहीं कोई सम्बन्ध नहीं बतलाये गये हैं।

४. नाथ सप्रदाय, पृ० ८२।



हुडेरा (रतनगढ) से प्राप्त मूर्ति–फलक

यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि माननाथी शाखा के जो मठ, आश्रम आदि चूरू, झुंझुनूं व सीकर जिले में हमारे देखने में आये हैं उनमें कहीं जालंधरनाथ, कान्हूपा (कृष्णपाद) व गोपीचन्द की मूर्तियाँ न होकर गोरखनाथ की मूर्तियाँ ही हैं। स्व० सोमनाथ जी द्वारा सरदारशहर में बनवाये गये नाथाश्रम में भी गोरखनाथ और माननाथ की ही मूर्तियां स्थापित हैं। इससे यही लगता है कि माननाथी शाखा के प्रवर्तक गोपीचन्द नहीं हैं।

दूसरी मान्यता यह है कि मननाथी या माननाथी शाखा के प्रवर्तक राजा रसालू (रिसालू) हैं और इनका आदि स्थान चूरू से लगभग ८ कोस की दूरी पर झुंझुनूं जिले की झुंझुनूं तहसील में बिसाऊ के निकट टाई ग्राम में है।[1] डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार राजा रसालू पूरनभगत के वैमात्रेय भाई थे। वे गोरखनाथ के पूर्ववर्ती हैं। इस समस्या का एक-मात्र समाधान यही हो सकता है कि वैसे तो ये दोनों गोरखनाथ के पूर्ववर्ती ही हैं, इनके द्वारा समर्थित शैव साधकों में कुछ योगाचार रहा होगा जिसे गोरखनाथ ने नये सिरे से अपने मत में शामिल कर लिया होगा। गोरखनाथ अपने काल के इतने प्रसिद्ध महापुरुष हुए थे कि उनका नाम अपने पंथ के पुरोभाग में रखे बिना उन दिनों किसी को गौरव मिलना सम्भव नहीं था। इस प्रकार पूर्ववर्ती सम्प्रदाय का नवोदित शक्तिशाली सम्प्रदाय में अन्तर्भुक्त होना अनहोनी वात नहीं है। परवर्ती इतिहास में इसके अनेक प्रमाण हैं।[2]

यह लक्ष्य करने की बात है कि रावळ लोग जो वस्तुतः लकुलीश सम्प्रदाय के पाशुपत थे, अपना सम्बन्ध राजा रसालू से बताते हैं और उनकी प्रधान शाखा गल या पागल-पंथी चौरंगीनाथ (पूरनभगत) को अपना मूल-प्रवर्तक मानते हैं। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने एक परम्परा के आधार पर लिखा है कि ज्वालामुखी के माननाथ राजा रसालू के अनुयायी बताये

---

१. इस क्षेत्र में राजा रसालू, गोपीचन्द, पूरनभगत एवं भरथरी के नाम बहुचर्चित रहे हैं और ये चारों ही नाम प्राचीन राजवंशों से सम्बन्धित हैं।

२. नाथ-सम्प्रदाय, पृ० १६२-१६३।

गये है।[1] डॉ० रांगेयराघव ने अपने शोधप्रबन्ध में रसालू से सम्बन्धित जो जनश्रुतियाँ दी हैं उनमें से एक यह भी है कि वह एक चौहान राजा का पुत्र था। राजपूतों के बगर नामक स्थान के एक राजा को वह गोरक्ष के प्रसाद से प्राप्त हुआ था।[2] उन्होंने पृ० ५२ पर एक गोरखवाणी उद्धृत करते हुए लिखा है- रसालू का तो तोता भी गोरखनाथ को अपना गुरु मानता था। डॉ० हीरालाल माहेश्वरी ने अपने शोध-प्रवन्ध ("जाम्भोजी विश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य" पृ० २०६) में पंथ का नाम मन्नाथी (माननाथी), मूल पुरुप महाराज रसालू और स्थान का नाम टाइयां दिया है। 'श्री विलक्षण अवधूत' नामक पुस्तक के लेखक दुर्गाप्रसाद त्रिवेदी 'शंकर' ने भी टाईं की मन्नाथी शाखा को राजा रसालू द्वारा प्रवर्तित बतलाया है (पृ० ६-७, संवत् २००६ में प्रकाशित)। श्री अमृत-नाथाश्रम, फतेहपुर (सीकर) से सं० २०३५ (वि०) में प्रकाशित 'श्री विलक्षण अवधूत' पुस्तक के परिवर्द्धित संस्करण में भी यही बात दोहराई गई है और इसकी प्रस्तावना में पुरोहित हरिनारायण बी० ए० विद्याभूषण ने लिखा है कि यहॉ राजा रिसालू का नाम विशेषतः लिख देना है। यह राजा मननाथ वा मन्नाथ कहाये और प्रायः भ्रमण में ही रहते थे। अन्त में शेखावाटी परगने के टाई कस्वे मे आ विराजे और यहीं पर इनका शरीरान्त हुआ था और यहीं पर इनका समाधि-स्थान भी है। इनके शिष्य मन्नाथी कहाते हैं (पृ० २)।

लक्ष्मणगढ़ (सीकर) के नाथाश्रम के पीठाधीश्वर श्री वैजनाथजी ने भी अपनी पुस्तक 'सहजयोगी सन्त श्री श्रद्धानाथ जी महाराज-साधना और विचार' (प्रकाशन सन् १९९६ ई०) में राजा रसालू को ही माननाथ लिखा है (पृ० १७०)।

---

१. नाथ सम्प्रदाय, पृ० १४६।

२. गोरखनाथ और उनका युग, पृ० २२, -यह बगर संभवतः झुंझुनू तहसील का गाँव बगड ही है जो टाईं से अधिक दूर नहीं है। ददरेवा के चौहान राणा गोगा और गुरु गोरखनाथ के साक्षात्कार की बात भी प्रसिद्ध है। टाईं, बगड और ददरेवा की परस्पर दूरी भी अधिक नहीं है। प्रसिद्ध चौहान पृथ्वीराज तृतीय (राय पिथौरा) के समय में यह क्षेत्र उसके अधीन था।

आज से कोई २५ वर्ष पहले लोक संस्कृति शोध संस्थान, नगरश्री, चूरू के मंत्री श्री सुबोधकुमार अग्रवाल इस सम्बन्ध में जानकारी लेने टाईं गये थे। उनका भी यही कथन है कि मठ में अनेक समाधियाँ बनी हैं जो मानानाथ (राजा रसालू) से लगाकर मठ के सभी परवर्ती नाथों की बतलाई जाती हैं। इसी सन्दर्भ में मैं भी दिनांक १.१२.६८ को श्री सुबोधकुमारजी एवं श्री गोविन्दजी अग्रवाल के साथ टाईं गया था। उस समय मठ के वर्तमान मठेश्वर श्री ज्ञाननाथजी तो बाहर गये हुए थे, उनके शिष्य सोमवारनाथजी ने मन्नाथ से लगाकर केशरनाथ तक की ३३ समाधियाँ दिखलाई जिन पर सबके नाम और क्रम-संख्याएँ भी अंकित हैं। उन्होंने यह भी बताया कि यह मठ राजा रसालू (माननाथ) द्वारा स्थापित है जो इस माननाथी शाखा के प्रवर्तक थे। इस सन्दर्भ में हम माननाथियों के जिन-जिन मठों में गये और जिन-जिन नाथों से सम्पर्क किया उन सभी ने यही बताया कि टाईं का मठ राजा रसालू द्वारा बनवाया गया था जिनका नाम संन्यास-ग्रहण के बाद माननाथ या मन्नाथ (मन को नाथने वाला, वश में करने वाला) हो गया था। इस प्रकार विभिन्न साक्ष्यों के आधार पर माना जा सकता है कि मन्नाथी शाखा के मूल-प्रवर्तक राजा रसालू ही थे, जिनका स्थान टाईं (जिला झुंझुनूं) है।

## मन्नाथी शाखा की झुंझुनूं-परम्परा

टाईं की इसी मन्नाथी परम्परा में आज से लगभग दो सौ पोने दो-सौ वर्ष पूर्व संत चंचलनाथ जी ने झुंझुनूं में अपना नाथ-आश्रम बनाया। श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा 'शंकर' ने वि० सं० १६८४ में प्रकाशित अपनी पुस्तक (संक्षिप्त जीवन चरित्र- स्वामी श्री १०८ अमृतनाथजी) में वि० सं० १६०० में इस आश्रम की स्थापना होनी लिखी है (पृ० ११३) जबकि उन्होंने ही अपनी दूसरी पुस्तक 'श्री विलक्षण अवधूत' (परमहंस श्री अमृतनाथजी) में पृ० ११६ पर इस आश्रम का निर्माण चंचलनाथजी द्वारा वि० सं० १७००

के लगभग करवाया जाना लिखा है तथा संवत् २०३५ के परिवर्द्धित संस्करण (प्रकाशक- महन्त श्रीहनुमाननाथजी, अमृतनाथाश्रम, फतेहपुर) में भी आश्रम-स्थापना का यही संवत् (१७००) दोहराया गया है (पृ० २६२)। लेकिन ये संवत सही नहीं लगते, क्योंकि चंचलनाथजी के एक शिष्य मोतीनाथजी के लिए वि० सं० १६१६ में लिखी गई एक हस्तप्रति की प्रतिलिपि झुंझुनूं आश्रम में अभी मौजूद है। गत १ दिसम्बर, १९९८ को जब मैं श्री सुबोधकुमार जी अग्रवाल व श्री गोविन्दजी अग्रवाल के साथ झुंझुनूं-आश्रम में गया तो मठ के वर्तमान पीर ओमनाथजी ने यह जीर्ण हस्तप्रति हमें दिखलाई थी। इससे ज्ञात होता है कि आगरा के वैश्य (वांनीयों) उधोदास के पुत्र लालादास ने "महाभारथ इतिहास सार" की हिन्दी पद्य टीका लिखी थी, जिसकी ४८ पन्नों वाली एक हस्तप्रति मोतीनाथजी जोगेश्वर ने सं० १६१६ आसाढ़ सुदी ६ को लिखवाई थी, जैसा कि हस्तप्रति के अन्तिम पृष्ठ ४८ पर लिखा है-

**"इति श्री महाभारथे इतिहास सार समुच्चये तेतीसमो ध्याय।। ३३।। (१०१३) इति श्री सांतिप्रव की इतिहास कथा संपूरण भेवेत् मिती साढ़ सुदी ६ सम्वत् १६१६ *का लिषांइतं* मोतीनाथजी जोगेश्वर"।**

इससे मोतीनाथजी के जीवनकाल की एक निश्चित तिथि ज्ञात होती है जिसके आधार पर झुंझुनूं-आश्रम की स्थापना का समय तय करने में पर्याप्त सहायता मिलती है।

इस पुष्पिका-लेख एवं दुर्गाप्रसाद त्रिवेदी 'शंकर' की पुस्तक 'श्री विलक्षण अवधूत' (प्रकाशन-सम्वत् २००६ वि०) के पंचमोल्लास (पृ० १८-२३) में वि० सं० १६४५ में ऋणी (रेनी- अब तारानगर) में दिखलाई गई मोतीनाथजी की उपस्थिति के आधार पर श्री गोविन्द अग्रवाल (इतिहासकार) ने इस मठ की स्थापना का समय वि० सं० १८७५ के लगभग होने की संभावना व्यक्त की है।

श्री मोतीनाथ जोगेश्वर द्वारा सं० १६१६ में लिखाई गई 'महाभारथ इतिहास सार' पद्य–टीका की हस्तप्रति का अंतिम पृष्ठ

चंचलनाथजी के चार शिष्य- मोतीनाथजी, क्षमानाथजी, गणेशनाथजी और एक कोई अन्य थे। क्षमानाथजी ने बारावास (लोहारू) में अपना आश्रम बनाया। क्षमानाथजी के शिष्य चम्पानाथजी हुए। चम्पानाथजी के शिष्य श्री अमृतनाथजी हुए जिनका जन्म बिसाऊ के पास पिलानी[1] नामक ग्राम में चेतनराम जाट के घर वि० सं० १६०६ में हुआ था। उनका जन्म-नाम जसराम (यशराम) था। पिता ने इनका विवाह करना चाहा तो इन्होंने स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि मैं तो आजन्म ब्रह्मचारी रहूँगा। वि० सं० १६४५ में सिरजननाथजी ने उनकी शिखा काटी और बारावास ले जाकर चम्पानाथजी को भेंट की। आप (अमृतनाथजी) भी उनके साथ गये। चम्पानाथजी ने उनका नाम अमृतनाथ रखा। वि० सं० १६४६ में बारावास में ही ज्वालानाथजी ने उनको चीरा लगाया। वि० सं० १६४७ में आप राजपुरा होते हुए चूरू आये और यहाँ पीथाणा जोहड़ा पर रहे। वि० सं० १६५१ में चूरू के कनीरामजी कोटारी, बजरंगलाल गोयनका और तोलाराम पारख आदि आपके सम्पर्क में आये। वि० सं० १६५६ के अकाल (जो छप्पनिया अकाल के नाम से जाना जाता है) में भी आप चूरू में थे।

वि० सं० १६५६ में जब चूरू मे भगवानदास बागला के डंडे में आप निवास कर रहे थे तब श्री ज्योतिनाथजी इनके दर्शनार्थ चूरू आये। ज्योतिनाथजी का जन्म हरियाणा प्रान्त के ल्णोदा ग्रम में वि० सं० १६३४ मे हुआ था। इन्होंने अमृतनाथजी के चरणों में अपने को समर्पित कर दिया। अमृतनाथजी ने बूंटिया मठ के संत छल्लूनाथजी से इनका कर्ण-छेदन करवा दिया।

## दीक्षा

वि० सं० १६७२ मे श्री अमृतनाथजी की आज्ञा से ज्योतिनाथजी ने मोहननाथ, भानीनाथ और द्वारकानाथ को अपना शिष्य बनाकर दीक्षित किया। इससे पूर्व श्रीकृष्णनाथजी और लालनाथजी वचन के बल पर नाथ बन चुके थे। आश्विन शुक्ला १५ सं० १६७३ वि०, बुधवार को

१. यह पिलानी बिडलों वाली प्रसिद्ध पिलानी नहीं, बिसाऊ के पास पिलानी नाम का एक छोटा गॉव है।

श्री अमृतनाथजी ने देह त्याग दी। इनके सम्बन्ध में विशेष जानकारी के लिए श्री दुर्गाप्रसाद त्रिवेदी (शर्मा) 'शंकर' की तीनों पुस्तकें द्रष्टव्य हैं जिनका उल्लेख ऊपर हो चुका है। श्री अमृतनाथजी से सम्बन्धित अनेक चमत्कारिक घटनाएँ इनमें संकलित हैं।

प्राप्त जानकारी के अनुसार अमृतनाथजी के प्रिय शिष्य किशननाथ जी[1] वि० सं० १९७४ में फतेहपुर से चूरू आये। पहले कुछ दिनों तक चूरू गौशाला के सामने बने पीथाणा जोहड़ा की धर्मशाला[2] में रहे। कुछ समय बाद थोड़े समय तक शीतला मन्दिर में रहे और उसके बाद शीतला मन्दिर के सामने बनी मंत्रियों की छतरी में मालिको की अनुमति से रहने लगे। बाद में भानीनाथजी और द्वारकानाथजी भी यहाँ आकर रहने लगे और फिर कुछ अन्य नाथ भी यहाँ आकर रहने लग गये।

वि० सं० १९८३ में फतेहपुर में जब श्री अमृतनाथजी का भण्डारा हुआ तब भण्डारे के कुछ दिन बाद श्री ज्योतिनाथजी ने श्रीकृष्णनाथ (किशननाथ) लालनाथ, बैजनाथ, शोभानाथ, भानीनाथ, द्वारकानाथ सहित सिन्ध प्रान्तीय हिंगलाज देवी की यात्रा की और फिर द्वारकापुरी की यात्रा कर लौटे।[3]

---

१. श्री शंकरनाथजी के अनुसार किशननाथजी बऊ ग्राम (सीकर) के स्वामी परिवार में भाद्रपद कृष्णा ३ वि० सं० १९४० में जन्मे थे। श्री अमृतनाथजी उन्हें मांगकर लाये थे। फिर उन्होंने अपना शिष्य बना लिया। वे बडे पहुँचे हुए संत थे।

२. चूरू गौशाला का निर्माण वि० सं० १९४५ में चूरू के सुप्रसिद्ध सेठ शिवबक्सराय जी बागला ने करवाया था। गौशाला के सामने ही यह पीथाणा जोहड़ा बना हुआ है। पहले यह जोहड़ा कच्चा था फिर शिवबक्सरायजी ने इसे पक्का बनवा दिया और वहां पर एक धर्मशाला का भी निर्माण करवा दिया। इन्हें राजा की पदवी प्राप्त थी और मारवाड़ियों में सर्वप्रथम शेरिफ का पद प्राप्त करने वाले प्रतिष्ठित व्यक्ति थे।

३. श्री विलक्षण अवधूत (प्रकाशन सं० २००६ वि०), पृ० १२०-१२१।
-हिंगलाज में हिगलाज देवी जिसे मुसलमान 'बीबीनानी' और हिन्दू 'पार्वती' आदि कहते हैं, बहुत महत्वपूर्ण पीठ माना जाता है। 'गोरखनाथ और उनका युग' नामक शोध प्रबन्ध लिखने वाले डॉ० रागेय राघव लिखते हैं कि लक्कड़ बाबा ने मुझे बताया कि हिगलाज के अधिकारी असल मुसलमान अर्थात् मलंग ही हो सकते हैं। मलंग का अर्थ उनके अनुसार ब्रह्मचारी के समान ही कुछ था, (पृ० २५४, २५३)।

चूरू के वयोवृद्ध श्री भैरूंदानजी बियाणी जो नाथों के परमभक्त रहे हैं और लगभग ३० वर्षो तक उनका इन नाथों के पास बराबर जाना रहा है, ने बताया कि इस छतरी का निर्माण स्व० गणेशदासजी मंत्री के पुत्रों-जगन्नाथजी, घनश्यामदासजी व रामनारायणजी मंत्री ने अपने पिता के शव के दाहस्थल पर करवाया था। पहले इसके चारों ओर दीवार नहीं थी जो बाद में श्री जगन्नाथजी के पुत्र तोलारामजी मंत्री ने करवाई और पश्चिम की ओर एक बड़ा दरवाजा भी बना दिया। ये नाथ इस छतरी में कई वर्षों तक यहीं रहकर साधना करते रहे और इनके श्रद्धालु-भक्त और सेवकगण इनके पास यहीं आते रहे। वि० सं० २००० के आस-पास जब नया नाथ-आश्रम (गौशाला मार्ग पर) बन गया तो सभी नाथ वहाँ स्थानान्तरित हो गये। वि० सं० २००४ से श्री शंकरनाथजी मंत्रियों की छतरी की देख-रेख करते आ रहे हैं। इन्होंने छतरी के परिसर में 'बील' के लगभग २० वृक्ष लगा दिए हैं। छतरी के द्वार से प्रवेश करते ही बाईं ओर जहाँ पहले कुआँ था, एक भव्य कक्ष बनवा दिया है। एक रसोईघर, स्नानघर व सुलभ-शौचालय भी बनवा दिया है। निर्माण कार्य अभी चालू है। देहातों के कुछ विद्यार्थी जो चूरू के विद्यालयों में पढ़ते हैं, यहाँ रहते हैं। श्री रामलाल कुदाल के पुत्र हरिकृष्ण पूजा-अर्चा करते हैं और वर्तमान में श्रीशंकरनाथजी इसके संरक्षक बने हुए हैं। छतरी में प्रतिदिन पक्षियों को दाना डाला जाता है एवं ग्रीष्म ऋतु में प्याऊ भी लगाई जाती है।

## अ० भा० अवधूत भेष बारह पंथ योगी महासभा

नाथ-सम्प्रदाय की यह देशव्यापी प्रतिनिधि संस्था है। सभी नाथ-साधु जिन्हें योगी भी कहा जाता है, इस संस्था के सदस्य हैं। उन्हें संस्था की ओर से एक परिचय पत्र भी दिया जाता है। ये लोग अपनी संस्था को 'भेष' भी कहते हैं। संस्था का प्रधान कार्यालय श्री गोरक्षनाथ मन्दिर,

हरिद्वार और उप कार्यालय श्री गोरक्षनाथ मन्दिर, गोरखपुर है। योगी महासभा ने समय-समय पर देश, धर्म और समाज की महत्त्वपूर्ण सेवाएँ की है।[1]

सम्वत् २०२६ (वि०) में माननाथी शाखा के पीर, फतेहपुर (राजस्थान) गद्दी के महन्त श्री हनुमाननाथजी महाराज श्री शुभनाथजी महाराज के स्थान पर महासभा के उप सभापति निर्वाचित हुए। सन् १६७४ ई० में हरिद्वार में बारह वर्षीय कुम्भ महापर्व के शुभावसर पर महासभा का विराट सम्मेलन आयोजित किया गया। नाथ पंथ की ओर से आपका अभूतपूर्व अभिनन्दन करके मान पूजा की गई। दिनांक १० अप्रैल, १६७४ ई० को आप भेप बारह पंथ महासभा द्वारा समूचे नाथ पंथ के राजा के रूप में सर्वसम्मति से मांगलिक रूप से अभिषिक्त किये गये। पूर्वकाल में श्री मन्नाथी पंथ के किसी मठेश्वर को इतना महामहिम राजपुरुष का गौरव-लाभ व पद-प्रतिष्ठा नहीं मिली। आगामी बारह वर्षो के लिए आपको पीर-पदवी से विभूषित किया गया।[2]

वर्तमान में हनुमाननाथजी के स्थान पर फतेहपुर गद्दी के पीठाधीश्वर श्री नरहरिनाथजी महाराज हैं।



---

१. महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति-ग्रन्थ, पृ०-३६७।
२. श्री विलक्षण अवधूत, परमहंस श्री अमृनाथजी महाराज, पृ०-३२१, ३२४।






वचनसिद्ध अवधूत श्री भानीनाथजी

# लोकोपकारी प्रसंग

यह श्रीनाथजी की कृपा और स्वयं भानीनाथजी के त्याग, तप, ब्रह्मचर्य और पवित्र आचरण आदि सद्गुणों का ही प्रभाव रहा होगा कि वे वचन-सिद्ध हो गये। टाइफाईड के रोगी के लिए वैद्य और डॉक्टर जिस चीज को सर्वथा कुपथ्य मानते थे और कुपथ्य भी ऐसा, कि जिसको लेने से रोगी निश्चित रूप से मर जाए, श्रीभानीनाथजी उस रोगी को ऐसे ही ... भला-चंगा कर देते थे। इसे उनकी वचन-सिद्धि का प्रभाव नहीं कहा जा सकता है? इसी वचन-सिद्धि के बल पर उन्होंने रोगियों को ठीक कर दिया। वे अपनी इस सिद्धि का उपयोग हित ... सहज भाव से ही करते थे। कोई चमत्कार ... के लिए नहीं। वे तो यही कहते थे कि ... कर खाते हैं, हमारे पास क्या है? बड़े-बड़े नामधारियों के पास भी नहीं ... बात नहीं सोची, सदा सब का शुभ

... एकत्र करने के सन्दर्भ में जिन ... ने उनके प्रति गहरी श्रद्धा और ... कहा कि आज हम जो कुछ भी हैं, ... से ही हैं और उन्हीं की दी हुई रोटी ... के ऐसे अनेक प्रसंग हैं लेकिन ... पाई थी इसलिए यहाँ केवल ६८ ...

# लोकोपकारी प्रसंग

यह श्रीनाथजी की कृपा और स्वयं भानीनाथजी के त्याग, तप, ब्रह्मचर्य और पवित्र आचरण आदि सद्‌गुणों का ही प्रभाव रहा होगा कि वे वचन-सिद्ध हो गये। टाइफाईड के रोगी के लिए वैद्य और डॉक्टर जिस चीज को सर्वथा कुपथ्य मानते थे और कुपथ्य भी ऐसा, कि जिसको लेने से रोगी निश्चित रूप से मर जाए, श्रीभानीनाथजी उस रोगी को ऐसे ही 'कुपथ्य' से भला-चंगा कर देते थे। इसे उनकी वचन-सिद्धि का प्रभाव नहीं तो और क्या कहा जा सकता है? इसी वचन-सिद्धि के बल पर उन्होंने अनेक असाध्य रोगियों को ठीक कर दिया। वे अपनी इस सिद्धि का उपयोग पीड़ितों, आतुरों के हित के लिए सहज भाव से ही करते थे। कोई चमत्कार दिखलाने या अपना प्रभाव जमाने के लिए नहीं। वे तो यही कहते थे कि हम तो साधु हैं, गाँव में रोटी मांग कर खाते हैं, हमारे पास क्या है? लेकिन उनके पास जो कुछ था, वह बड़े-बड़े नामधारियों के पास भी नहीं था। उन्होंने कभी किसी के अनिष्ट की बात नहीं सोची, सदा सब का शुभ ही चाहा।

श्री भानीनाथजी के बारे में जानकारी एकत्र करने के सन्दर्भ में जिन लोगों से भी सम्पर्क हो पाया उन सभी ने उनके प्रति गहरी श्रद्धा और आस्था प्रकट की। कइयों ने तो यह भी कहा कि आज हम जो कुछ भी हैं, श्री भानीनाथ जी महाराज की कृपा से ही हैं और उन्हीं की दी हुई रोटी खा रहे हैं। यद्यपि उनसे सम्बन्धित जनहित के ऐसे अनेक प्रसंग हैं लेकिन श्री भानीनाथजी ने ६८ वर्ष की आयु पाई थी इसलिए यहाँ केवल ६८ प्रसंगों का ही उल्लेख किया जा रहा है।

## १

चूरू के रामेश्वरजी चमड़िया सातड़ेवाला का लड़का किशनलाल एक बार बीमार पड़ा। हालत ज्यादा खराब हो गई। पेशाब बन्द हो गया। तब आज जैसे चिकित्सा के साधन नहीं थे। डॉक्टर भी घबरा गया। इलाज नहीं बैठ पारहा था। रामेश्वरजी श्रीभानीनाथजी के पास पहुँचे और बोले कि महाराज, आपके पास दुःखी होकर आया हूँ। मेरे एक ही लड़का है और वह भी आज जा रहा है। आप दया करो तो वह बच सकता है। इस पर भानीनाथजी ने कहा कि घर जाओ, लड़का ठीक हो जायेगा। रामेश्वरजी को वापस घर आने पर पता चला कि लड़के के पेशाब उतर गया है। लड़के से पूछा तो उसने कहा कि मैं अब ठीक हूँ।

## २

चूरू के सेठ गजानन्द मड़दा[1] के पोते को भाव (टाइफाईड) निकल आया। बुखार १०४° फा० रहने लगा। तड़फन बहुत बढ़ गई। पाँच-सात दिन हो गये, कोई इलाज बैठा नहीं।

एक दिन भानीनाथजी झोली लेने उस गली में आये और अलख जगाया तो उनकी आवाज सुनकर गजानन्दजी अपनी हवेली से बाहर आकर

---

१. चूरू मण्डल के इतिहास में छपे वि० सं० १७४७ के मड़दा सती स्मारक लेख से स्पष्ट है कि मड़दा यहाँ के पुराने निवासी हैं। वि० सं० १८८४ की सेठ मिर्जामल हरभगत पोद्दार की बही से ज्ञात होता है कि चूरू के बाजार में मड़दों की १८ दुकानें थीं (चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास पृ० ३२०)। पिलानी के प्रसिद्ध उद्योगपति जुगलकिशोर घनश्यामदास आदि के दादा शिवनारायणजी का विवाह इसी मड़दा परिवार में हुणतरामजी की बेटी कुनणबाई के साथ हुआ था जिससे राजा बलदेवदास बिड़ला का जन्म हुआ था। इस परिवार में अब वयोवृद्ध रामकुमारजी मड़दा मौजूद हैं जिन्होंने चूरू में सार्वजनिक हित के अनेक कार्य करवाये हैं। मड़दों के अन्य परिवार भी समय-समय पर चूरू में आकर बसते रहे हैं। बाद में बलदेवदासजी बिड़ला का विवाह भी चूरू के माहेश्वरी सिपी परिवार में हुआ था जिनके बेटों ने चूरू में धर्म स्तूप और सफेद घटाघर का निर्माण कराया।

खड़े हो गये। जब भानीनाथजी पास आये तो उन्होंने 'जय श्रीनाथजी' कहकर निवेदन किया कि बच्चे को बड़ी तकलीफ है, कृपया हवेली के अन्दर चलकर उसे देखिए। इस पर वे अन्दर गये और लड़के को देखकर बोले- इसे गर्मी ज्यादा हो गई है, दही के साथ रोटी दो। घर में लड़के की माँ और दादी बोलीं- भाव में दही-रोटी कयां देवां? परन्तु गजानन्दजी को नाथजी की बात का पूरा विश्वास था, इसलिए उन्होंने पोते को दही के साथ रोटी खिलाई। उसी समय से उसकी स्थिति में सुधार आने लगा और वह बिल्कुल ठीक हो गया।

## ३

चूरू का प्रवासी भरतिया परिवार किसी शादी के सिलसिले में कलकत्ता से चूरू आया हुआ था। सेठ ओंकारमलजी, भगवानदासजी, डेडराजजी, चिमनजी आदि परिवार के सभी सदस्य थे। जेठ का महीना था। एक दिन शाम को करीब पाँच बजे ये सभी लोग श्री भानीनाथजी के दर्शन करने छतरियों में पहुँचे। डेडराजजी ने भानीनाथजी से कहा कि बाबा गर्मी बहुत पड़ रही है तो भानीनाथजी बोले- भई, मौसम ही गर्मी को है। इस पर डेडराजजी ने निवेदन किया- बाबा, वर्षा कराओ तो ठण्ड हो जावे। भानीनाथजी आसमान की ओर देखते हुए उसी समय छतरियों के ऊपर चले गये। उन्होंने ऊपर से ही कहा कि उत्तर दिशा में एक छोटा सा बादल दीख रहा है। फिर डेडराजजी के लड़के सीताराम की ओर इशारा करके बोले- सीता, थे सगळा मिलकर जल्दी से कुण्ड के पायतण नै साफ करो। इसके बाद वे नीचे आ गये। उस समय गाँवों से आये हुए कई सेवक भी वहाँ बैठे हुए थे। सबने मिलकर पायतण साफ कर दिया। थोड़ी ही देर में वह बादल ऊपर आया और बरसने लगा। यह वर्षा केवल चूरू शहर पर ही हुई।

## ४

चूरू के सेठ डेडराजजी भरतिया के पुत्र सीताराम कलकत्ता में बीमार हो गये। वैद्य-डॉक्टरों ने संग्रहणी रोग बताया। कई दिनों तक दवाई लेने पर भी कोई फायदा नहीं हुआ तो डेडराजजी ने 'देस' (जन्म स्थान, चूरू) में जाकर दवा दिलाने का निश्चय किया और सीताराम को साथ लेकर चूरू आ गये। चूरू के नामी वैद्य यति ऋद्धिकरणजी को बुलाकर दिखाया तो यतिजी ने कहा- 'तीन महीना लागसी। ठीक करदेस्यां, परपटी देस्यां।' इसी बीच भानीनाथजी एक दिन झोली हेतु आये और सीताराम को देखकर बोले- डेडराज, छौरे नै भोत कमजोर कर राख्यो है। इस पर डेडराजजी ने उन्हें बीमारी और इलाज सम्बन्धी पूरी जानकारी दी और बेबसी जताई। तब भानीनाथजी बोले- 'दवाई तो जाणां कोनी, सूका आँवला कूटकर दही के सागै खुआवो'। ऐसा ही किया गया और सीताराम एक हफ्ते में ही ठीक हो गया।[1]

## ५

एक बार श्रीभानीनाथजी भादों मास की अमावस्या पर स्नान करने के लिए लोहागर (लोहार्गल तीर्थ) गये। वापस आते समय रास्ते में नवलगढ़ के पास अपने पाँच-सात सेवकों के साथ एक खेत में चले गए। खेत में कुछ देर ठहरने के बाद अचानक बोले कि रास्ते पर चलो, कोई सेवक आ रहा है।

चूरू के श्री सीतारामजी भरतिया भादी अमावस्या पर ढांढणसती की जात देने के लिए प्रतिवर्ष की भांति ढांढण आए और वहाँ से चूरू पहुँचे।

---

१. इन्हीं श्री सीतारामजी भरतिया ने श्री मोहरसिहजी राठौड़ विधायक के सुझाव पर अपने पिता श्री डेडराज भरतिया (सन् १८६२-१९४५ ई०) के नाम पर जिला मुख्यालय चूरू में 'डेडराज भरतिया राजकीय जनरल अस्पताल' का निर्माण करवाया जो जिले का सबसे बडा साधन-सम्पन्न चिकित्सालय है।

चूरू में उन्हें जानकारी मिली कि भानीनाथजी तो लोहागर गए हुए हैं। इस पर भानीनाथजी के दर्शनार्थ वे मोटर से लोहागर की ओर चल पड़े। नवलगढ़ से आगे निकलते ही रास्ते पर अपने सेवकों के साथ श्री भानीनाथजी उन्हें मिल गए। देखते ही भानीनाथजी ने पूछा- सीताराम, इतणो क्यूं भाग्यो? सीतारामजी ने जवाब दिया- मैं तो आपके दर्शन करने के लिए ही आया हूँ।

## ६

चूरू के पण्डित जुगलकिशोर ओझा का पुत्र दीपचन्द कई दिनों से 'सीयादाऊ' (शीत ज्वर) से पीड़ित था। दवाई देते रहे, पर बुखार ने पिंड नहीं छोड़ा। घरवाले परेशान हो गए। एक दिन श्री भानीनाथजी झोली लिए उधर से निकले तो जुगलकिशोर से पूछा कि इस तरह घर के बाहर चबूतरे पर उदास क्यों बैठा है? जुगलकिशोर ने कहा- महाराज, मेरे तो एक ही लड़का है और वह भी बहुत बीमार है, आप अन्दर चलकर देखें। नाथजी अन्दर गए। उन्होंने अपनी झोली से रोटी का एक टुकड़ा तोड़ कर दीपचन्द को खिला दिया और उसका हाथ पकड़कर उसे बाहर ले आए। बुखार उतर गया।

## ७

चूरू के जगन्नाथजी होलाणी[1] के पुत्र लिखमीचन्द के पैर में सतपुड़ा (चमड़ी की सात परतें फाड़कर निकलने वाला फोड़ा) निकल आया। पैर में

---

१. होलाणी यहाँ के पुराने निवासी हैं। चूरू में इनके कई परिवार हैं। सन् १८२२-२३ ई० में ददरेवा के ठाकुर सूरजमल ने सशस्त्र विद्रोह किया था और फिर सेहला (रतनगढ़) की गढ़ी में आ घुसा था तब बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह के कहने पर सेठ मिर्जामल पोद्दार ने अपने मुनीम (गुमाश्ता) खेतसीदास होलाणी को राजकीय सेना के लिए खाद्य आदि का प्रबन्ध करने हेतु सेहला भेजा था।

बहुत दर्द और जलन हो गई। श्री भानीनाथजी झोली लेने आए तो वे बोले कि बाबा, पैर में बहुत पीड़ा हो रही है। भानीनाथजी ने कहा कि तीन दिन तक पैर को घी में रखो। ऐसा ही किया गया। तीन दिन बाद दर्द कम हो गया और फोड़े की जगह एक फफोला बन गया। भानीनाथजी फिर झोली लेने आये तो उन्होंने काला धागा पिरोई सुई से उस फफोले को बेंध दिया। फफोला फूट गया और बिना दवा लगाये ही पैर ठीक हो गया।

## ८

चूरू के श्री मेघराज गोयनका के घुटने में कोई ऐसी बीमारी हो गई कि उनका चलना फिरना बन्द हो गया। डॉक्टर-वैद्यों ने इसे असाध्य रोग बता दिया।

एक दिन मेघराज के बड़े भाई बजरंगलालजी ने भानीनाथजी से पूछा कि मेघराज का पैर ठीक नहीं हो रहा है, क्या करें? श्री भानीनाथजी बोले कि डरो मत, कुछ दिनों में ठीक हो जायेगा, पर दवाई पानी की चेष्टा मत करना। वैसा ही किया, दवा बन्द कर दी गई। कुछ ही दिनों में पैर अपने आप ठीक हो गया और मेघराज आराम से चलने फिरने लगा। कुछ समय बाद बजरंगलालजी ने भानीनाथजी से पूछा कि अब पैर बिल्कुल ठीक है, मेघराज का विवाह कर दें? उन्होंने कहा- विवाह कर दो, पैर में दुबारा कोई तकलीफ नहीं होगी। मेघराज का विवाह कर दिया गया और वे सारी उम्र आराम से रहे।

---

खेतसीदास ने वहाँ उत्तम व्यवस्था की थी जिसकी प्रशंसा राज्य स्तर पर भी की गई थी (नगर-श्री, चूरू द्वारा प्रकाशित मरु- श्री त्रैमासिकी)।

चूरू में सर्वहितकारिणी सभा को चन्दा देने वाले और सहायता करने वालों की सूची में किशनलाल होलाणी का नाम सर्वप्रथम लिखा है (स्वामी गोपालदास, पृ० ६७)।

## ६

चूरू के श्री सुगनचन्द सिरसलेवाला (महाजन) एक बार रात के समय बीड़ में आ गये पर वहाँ श्री भानीनाथजी ध्यान में बैठे थे। सुगनचंद भानीनाथजी के पास बाबा को प्रणाम कर वहीं बैठ गये। ध्यान टूटने पर भानीनाथजी ने उनसे पूछा कि रात के समय बीड़ में क्यों आया है? तो वे बोले कि आपके दर्शन करने। इस पर भानीनाथजी ने कहा- फिर कभी रात के समय बीड़ में मत आना; दर्शन करने हों तो सुबह-शाम छतरियों में आओ। सुगनचंद वहाँ से आ गये लेकिन उन्हें तसल्ली नहीं हुई।

कुछ दिनों बाद एक रात्रि में सुगनचंद फिर बीड़ में पहुँचे तो उन्हें अचानक शेर सामने खड़ा दिखाई दिया। शेर को देखते ही वे पसीने से तर-बतर हो गये, शरीर काँपने लगा। वे जोर से चिल्ला पड़े- बाबा बचाओ। इतने में ही थोड़ी दूर से भानीनाथजी की आवाज सुनाई दी डर मत, मैं आ रहा हूँ। नाथजी सुगनचंद के पास आ गए और उन्हें शेर दिखना बन्द हो गया। भानीनाथजी ने उनको समझाया कि जब तेरे को रात में बीड़ में आने के लिए मना किया था तो तू क्यों आया? सुगनचंद बोले- बाबा, अब कभी नहीं आऊंगा।

## १०

चूरू के श्री मुरारीलाल कासणिया (कसेरा) ने श्री भानीनाथजी से कई बार याचना की- महाराज! मेरै कोई टाबर कोनी, के करूं? आपकी कृपा हो ज्या तो सब कुछ हो सकै है। एक दिन भानीनाथजी बोले कि इधर देख। मुरारीलाल उनके सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया तब भानीनाथजी ने अपने हाथ का पंजा सामने करके कहा जा, तेरी सुनवाई हो गई। उसके बाद मुरारीलाल के क्रमशः पाँच लड़के हुए जो आज भी मौजूद हैं।

## ११

चूरू के श्री तोलारामजी पारख की आँखों में मोतियाविन्द हो गया। उन दिनों सुराना नेत्र चिकित्सालय में हर महीने की १५ तारीख को भिवानी वाले प्रसिद्ध नेत्र चिकित्सक श्री पी० डी० गिरधर चूरू आते थे और मोतियाविन्द के ऑपरेशन करते थे। पारखजी के पुत्र रावतमल का सुरानों के यहाँ आना-जाना भी था। डॉ० गिरधर ने आँखों को देखकर सलाह दी कि ऑपरेशन करवालो, नहीं तो आँखें चली जायेंगी। अगले महीने ऑपरेशन करवाना तय हो गया। इसी बीच श्री भानीनाथजी झोली लेकर भिक्षा के लिए उनके घर आए तो तोलारामजी ने ऑपरेशन करवाने की बात उनको बताई। सुनकर भानीनाथजी बोले- "सेट! क्यूँ आँख में खोवो खावै, आँख कठैई कोनी जावै।" तोलारामजी ने ऑपरेशन करवाने का विचार त्याग दिया। इसके बाद उनकी आँखें बराबर काम करती रहीं।

## १२

चूरू के श्री तोलारामजी पारख एक दिन घर में चिन्ता में बैठे थे कि श्री भानीनाथजी झोली लेने आ गए और बोले- "सेठ, कियां चिन्त्या में बैठ्यो है।" तोलाराम जी ने कहा- "बाबा! म्हारो तो परवार ही डूबग्यो। रावत रै तीन बायाँ पर एक टाबरियो होयो बो भी चल्यो गयो। फेर रावत री दूसरो ब्याव करयो, बीं रै भी एक गीगली कै बाद एक गीगो होयो पण बो भी म्हानै छोड़ चल्यो गयो।

इस पर भानीनाथजी बोले- "सेठ! चाहे धन राखले, चाहे बेटा।". तोलारामजी उबल पड़े और बोले- "बाबा! धन रो के बाळस्यां? बेटा ही चाये।" तब नाथजी यह कहते हुए चले गये कि "सेठ, जणां तो गीगला खिलासी ही।" आज रावतमलजी पारख का भरापूरा परिवार है।

## १३

चूरू के महाजन श्री टोरमल सिरसलावाला के एक हाथ में भयंकर फोड़ा निकला। काफी दवा-पानी की गई पर हाथ ठीक नहीं हुआ। घरवालों ने डॉक्टर को दिखाया। डॉक्टर ने सलाह दी कि हाथ कटवाना पड़ेगा, नहीं तो इसका ज़हर सारे शरीर में फैल जायेगा और उसके बाद कोई इलाज नहीं हो सकेगा। इस पर टोरमल भानीनाथजी के पास गये और गिड़गिड़ाकर बोले कि बाबा, डॉक्टर ने तो मेरा हाथ कटवाने की बात कही है। नाथजी ने टोरमल को आश्वस्त करते हुए कहा कि हाथ कटाना नहीं है, ऐसे ही ठीक हो जायेगा। नीम के पत्ते पानी में उबालकर उस पानी से हाथ धो लिया कर। टोरमल ने ऐसा ही किया और हाथ थोड़े दिनों में ठीक हो गया।

## १४

चूरू में बैजनाथजी भरतिया का पुत्र शीवू[1] अचानक इतना बीमार हो गया कि डॉक्टरों ने भी उत्तर दे दिया। सारे घरवाले घबरा गये। संयोग से थोड़ी देर में ही श्रीभानीनाथजी झोली लेने आ गये और अलख जगाया तो बैजनाथजी ने उनके पास आकर अरदास की कि बाबाजी, कृपा करके जरा ऊपर चलिए, लड़का बहुत ज्यादा बीमार है। बाबाजी ऊपर गये और लड़के को देखकर बोले, कहाँ बीमार है, यह तो ठीक है। उसके शरीर पर हाथ फेरकर चले गये। लड़का बिल्कुल ठीक हो गया।

## १५

चूरू के बैजनाथजी भरतिया कलकत्ता रहा करते थे। एक बार उनके गले में कुछ तकलीफ हो गई। डॉक्टर ने एक छोटा सा ऑपरेशन कर दिया। तात्कालिक तौर पर तकलीफ मिटगई किन्तु कुछ समय बाद फिर वही

---

१. श्री शंकरनाथजी महाराज के प्रसंग-संग्रह में यही नाम लिखा था।

शिकायत हो गई। डॉक्टरों ने कैंसर की आशंका भी प्रकट कर दी। इससे वे बहुत ही चिन्तित रहने लगे। निदान उन्होंने भानीनाथजी को याद किया। उसी रात को उन्हें सपने में भानीनाथजी का दरसाव हुआ। उन्हें लगा मानो नाथजी कह रहे हैं कि तेरे ऐसी कोई गड़बड़ नहीं है, चल मेरे साथ। इसके बाद बैजनाथजी ने बड़े डॉक्टरों से समुचित परीक्षण करवाया तो गले में कैंसर का कोई भी लक्षण नहीं मिला।

## १६

चूरू के गौरीशंकरजी भावसिंहका[1] का लड़का गोपीराम जब अढ़ाई महीने का ही था, उसे निमोनिया हो गया। लड़के की हालत इतनी खराब हो गई कि वैद्य-डॉक्टर भी घबरा गये। उन दिनों उपचार के इतने साधन भी नहीं थे। संयोग देखिए, उसी समय भानीनाथजी झोली लेने के लिए वहाँ आ गये तो गौरीशंकरजी ने कहा- बाबा, लड़का बहुत बीमार है। भानीनाथजी ने लड़के को देखकर कहा, "ईं नै मतीरै की गिरी चटाओ, ओ तो पगड़ी आळो मोट्यार होसी, ईं कै कोई गड़बड़ कोनी।" मतीरे की गिरी चटाई गई। लड़का उसी दिन ठीक हो गया और माँ का दूध पीने लगा। श्री गोपीराम आज भी स्वस्थ व सम्पन्न हैं और इस बात की पुष्टि करते हैं, साथ ही यह भी कहते हैं कि हमारे तो नाथजी की कृपा से ही सब कुछ ठीक चल रहा है।

---

१. भावसिहजी अग्रवाल के वंशज भावसिहका कहलाते हैं। ये चूरू के पुराने निवासी हैं और कई भावसिहेका परिवारों में अच्छी सम्पन्नता रही है। चूरू के निकटवर्ती कस्बा रतननगर के बसाने में इनका पर्याप्त सहयोग रहा है। चूरू के सार्वजनिक निर्माण कार्य में इस परिवार का पर्याप्त योगदान रहा है। हरिबक्सजी भावसिंहका ने स्वामी गोपालदासजी के अनुरोध पर १३७०।। बीघा जमीन गोचर भूमि के लिए सरकार से छुडवाई थी। बाद में इनके पुत्रों ने वहाँ हनुमानगढ़ी का निर्माण वि० स० १६८०-८१ में करवाया था जहाँ आज भी कई दर्शनार्थी नित्य ही जाते हैं। चूरू के श्री वैजनाथजी भावसिहका जिनका व्यापार बिहार (चम्पारन) में था, वे सन् १६२१, १६३०, १६३२ और १६४२ के आन्दोलनों में सरकार द्वारा जेल भेजे गये थे। सन् १६४२ के आन्दोलन में इनका मकान लूट लिया गया था (स्वामी गोपालदासजी की जीवनी सम्बन्धी पुस्तक द्रष्टव्य है)।

## १७

चूरू के श्री हरखचन्द कन्दोई मंत्रियों की छतरी में श्री भानीनाथजी के पास जाकर बैठ गये। नाथजी बाजरे के सिट्टों का मोरण[1] चबा रहे थे। वे हरखचन्दजी को भी मोरण देने लगे। मोरण के तीन फाके[2] चबाने के बाद चौथी बार हरखचन्दजी ने कहा, "बाबाजी! मैं तो धापग्यो, और कोनी लेऊँ।" इस पर भानीनाथजी बोले, "नहीं लेवै तो तूं जाणै, पण सेठ! रिपिया आछै काम में लगाई।" इसके बाद सेठजी को अच्छी कमाई हुई। उन्होंने अपनी हवेली बनवाई, चाँदी की पालकी बनवाकर बड़े मन्दिर में चढ़ाई, श्री भानीनाथजी के आश्रम (नया नाथमठ) में एक बड़ा कमरा बनवाया तथा अन्य कई अच्छे कामों में रुपये लगाये। यदि हरखचन्दजी मोरण के दो चार फाके और लेलेते तो बात ही दूसरी होती, धन से खजाना भर जाता।

•

## १८

चूरू के श्री गौरीशंकर भावसिंहका की पुत्री ऋद्धि-सिद्धि का विवाह शीघ्र ही होने वाला था। उस समय उनके पिता हरिबक्सजी ज्यादा बीमार हो गये तो बहुत चिन्ता हुई कि विवाह कैसे होगा? श्री भानीनाथजी जब झोली लेने आये तो गौरीशंकरजी ने विवाह और पिताजी की बीमारी की बात बाबाजी से कही। भानीनाथजी ने हरिबक्सजी को देखा और बोले कि दूध के साथ बाजरे की रोटी खिलाओ। दूध-रोटी खिलाई गई। दो दिनों में ही वे ठीक हो गये। विवाह सानन्द सम्पन्न हुआ।

---

१. मोरण- बाजरे के सिट्टों को आग पर सेक कर निकाले हुए दाने।
२. फाका- हथेली पर रखा हुआ मोरन का ग्रास जिसे फाक कर मुंह में चबाया जाता है।

## १६

चूरू के ज्वालजी[1] (ज्वालाप्रसाद) बाजोरिया को दमा ने दबा लिया। बहुत दवा ली, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। एक दिन श्री भानीनाथजी झोली लेने आये तो ज्वालजी ने कहा कि बाबाजी! साँस की बीमारी बहुत दुःख देरही है। दवा तो काम ही नहीं करती है। तब भानीनाथजी ने कहा, "दवा तो जाणूं कोनी सेठ! बड़ा खाया कर।" ज्वालजी ने बड़े मंगवाकर खाये तो उनको बड़ी राहत मिली।

## २०

चूरू के श्री लिछमणराम सोनी का पुत्र शंकर जो तब नौ-दस महीनों का ही था, बहुत बीमार हो गया। दवा लगी नहीं। घरवाले चिन्तित रहते थे। एक रात उसकी हालत और अधिक खराब हो गई तो उसकी दादी दुर्गादेवी उसे गोद मे लेकर श्री भानीनाथजी के पास छतरी में पहुँची। नाथजी ने कहा कि बावळी (पगली) रात में बच्चे को लेकर यहाँ क्यों आई है? दुर्गादेवी ने कहा कि बाबाजी! बच्चा बहुत बीमार है। इस पर बाबाजी बोले-ला, इसे मेरे पास लिटादे। दादी ने नन्हें पोते को बाबाजी के पास लिटा दिया। थोड़ी ही देर में वह खेलने लगा तो बाबाजी ने कहा कि अब इसे घर लेजा, इसके कोई बीमारी नहीं है। शंकर स्वस्थ हो गया और अब भी स्वस्थ एवं सम्पन्न है।

## २१

चूरू के श्री ओकारमलजी भरतिया के पुत्र गौरीशंकर का विवाह गंगाधरजी खेमका (रतनगढ़वाले) के पुत्र बजरंगलाल की पुत्री देवीबाई के

---

१. इनके एक पौत्र डॉ० प्रमोद बाजोरिया एम०डी० वर्तमान में डेडराज भरतिया राजकीय जनरल अस्पताल, चूरू में अपनी चिकित्सा-कुशलता एवं सदाशयता के कारण अच्छी लोकप्रियता अर्जित कर रहे हैं।

साथ हुआ था। दोनों परिवार कलकत्ता में ही रहते थे। विवाह के कुछ समय बाद भरतिया परिवार नव-वधू सहित चूरू आगया। लेकिन आने के कुछ दिनों बाद ही पुत्र-वधू को भाव निकल आया। काफी इलाज कराया, परन्तु कोई फायदा नहीं हुआ। तब ओंकारमलजी ने बहू के पीहरवालों को सूचना दी। बीमारी की सूचना कलकत्ता में पहुँचते ही उसके दादा-दादी, पिता और माँ- सब उसे देखने के लिए चूरू आये। देवीबाई की कमजोर हालत को देखकर सब चिन्तित हो गये। थोड़ी देर में भानीनाथजी झोली लेने आये तो ओंकारमलजी ने कहा- बाबाजी, गौरीशंकर की बहू ज्यादा बीमार है, उसे देखिए। भानीनाथजी ने देवीबाई को देखकर पूछा, "बेटी! के चीज खाणै को मन करै है? तब देवीबाई बोली, "बाबाजी! दाळ-मोठ खाऊँगी।" नाथजी बोले, "ल्याओ भई, थोड़ा दाळ-मोठ ल्याओ।" देवीबाई की माँ वहीं खड़ी थीं। कलकत्ता से आते समय वह मिठाई के साथ दाल-मोठ भी लाई थी। उसने तुरन्त कुछ दाल-मोठ लाकर दे दिए। नाथजी ने उसे मुट्ठीभर दाल-मोठ खिला दिए और वहाँ से चले गये। कुछ देर बाद देवीबाई के दादाजी और पिताजी को पता चला तो वे बड़े दुःखी हुए और उलाहना देते हुए गौरीशंकर से कहा, "कुँअरजी! टाइफाईड में साधू के कैणैं सैं दाळ-मोठ खुवा दिया, अब या तो बंचै कोनी।" ओंकारमलजी ने भी यह बात सुनी तो बोले- साहजी! हमें तो पूरा विश्वास है कि बहू ठीक हो जायेगी। इतने में वैद्यजी आ गये। उन्होंने नब्ज देखी तो बुखार उतार पर था। वैद्यजी ने कहा- भाव में इस प्रकार बुखार उतरना ज्यादा खराब है। इस पर गंगाधरजी अधीर होकर ओंकारमलजी से कहने लगे, "साहजी, भोत भूल करदी, म्हारी बेटी नै आळीसाट मार दी।" ओंकारमलजी बोले- "साहजी! घबराओ मत, सब ठीक होसी।" रात निकल गई। दूसरे दिन देवीबाई तो खाने के लिए रोटी मांगने लगी। अब वह खतरे से बाहर थी।

खेमका परिवार को बड़ा सुखद आश्चर्य हुआ। उन्होने श्री भानीनाथजी के दर्शनों की इच्छा प्रकट की। अगले दिन भरतिया और खेमका

दोनों परिवार मंत्रियों की छतरी में भानीनाथजी के दर्शन करने गये। गंगाधरजी की पत्नी शृंगारदेवी ने नाथजी से कहा- बाबाजी, मेरी आँखों में मोतियाबिन्द हो गया है, कम दीखता है, कोई उपाय बताओ। भानीनाथजी बोले, "टण्डे पाणी स्यूं आंख्यां नै रोज धोयाकर, दीख बोकरसी।" शृंगारदेवी ने आँखें धोनी शुरु कर दीं और उनको सारी उम्र ठीक दीखता रहा।

## २२

चूरू के बी० डी० बागला हॉस्पिटल में डॉ० मघलालजी शर्मा जिन दिनों कार्यरत थे उस समय उनके द्वितीय पुत्र सुरेन्द्रकुमार की आयु लगभग पाँच- छह वर्ष की थी कि उसके पेट में भयंकर दर्द रहने लगा। दवा-पानी से कोई फायदा नहीं हुआ। एक दिन भानीनाथजी उधर झोली लेने के लिए आये तो सुरेन्द्रकुमार की नानीजी अनसूया देवी ने कहा कि बाबाजी, सुरेन्द्र के पेट में बहुत दर्द रहता है। आप इसे ठीक करो। भानीनाथजी बोले, "मैं कोई डॉक्टर-वैद थोड़ो ही हूँ।" दूसरी बार जब वे झोली लेने आये तो अनसूया देवी ने फिर कहा कि बाबाजी, इसे आप ही ठीक करो, बहुत दुःख पारहा है। तब श्री नाथजी बोले, "एक छोटी सी रोटी बाळ कर ईनैं खुवादे।" ऐसा ही किया गया और पेट का दर्द दूर हो गया। चूरू के डॉ० नरेन्द्रकुमार शर्मा[1] के छोटे भाई

---

१. डॉ० नरेन्द्रजी ने सन् १६६८ से १९९६ तक बी० डी० बागला डिसपेंसरी, चूरू के प्रभारी चिकित्साधिकारी रहकर लगातार २८ वर्ष तक नये-पुराने २१ लाख मरीजों की चिकित्सा कर राज्य सेवा में अतुलनीय मानक स्थापित किये हैं।

इनके नाना पं० भालचन्द्रजी वैद्य ख्याति प्राप्त चिकित्सक थे। ये सर्वहितकारिणी सभा के कार्यक्रमों में सक्रियता से भाग लेते थे। २६ जनवरी, १९३० को चूरू के धर्मस्तूप पर जो तिरगा झण्डा लगाया गया था, वह धर्मस्तूप के निकट इन्हीं की बगीची में तैयार किया गया था। बीकानेर राज्य षड्यन्त्र केस में पुलिस ने सर्च वारण्ट लाकर इनकी अनुपस्थिति में इनके घर की तलाशी ली थी। बाद में कलकत्ता

डॉ० सुरेन्द्रकुमार शर्मा जो कलकत्ता में कार्यरत हैं[1], को बचपन की यह घटना आज भी याद है।

## २३

चूरू में श्री ऋद्धिकरणजी मड़दा की लड़की सरला बहुत बीमार हो गई। पेशाब और शौच बन्द हो गया। डॉक्टरों ने दवा दी, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। इस पर ऋद्धिकरणजी ने चम्पालाल नाई को भानीनाथजी को बुलाने भेजा। झोली लाने का समय था, इसलिए बाबाजी उसे कटले के पास ही मिल गये। चम्पालाल ने सारी स्थिति बताई तो उन्होंने मड़दाजी के घर जाकर सरला को देखा और बोले, "ईनैं लाडू खुवाओ।" लड्डू खिलाने की बात घरवाली के गले नहीं उतरी, किन्तु सेठ ऋद्धिकरणजी को बाबाजी की बात पर पूरा भरोसा था। सरला को लड्डू खिलाया गया और थोड़ी देर बाद उसके शौच और पेशाब साफ लग गये। वह बिल्कुल ठीक हो गई।

## २४

चूरू के महाजन नागरमलजी छोटड़ियेवाले की पत्नी बहुत दिनों से बुखार से पीड़ित थी। दवा से कोई फायदा नहीं हुआ। एक दिन जब भानीनाथजी झोली लेने उनके घर आये तो नागरमलजी ने प्रार्थना की कि बाबाजी, बुखार तो घरवाली को पिण्ड ही कोनी छोडै। इस पर भानीनाथजी ने झोली में से एक रोटी निकाल कर दी और उनकी घरवाली से बोले, "बेटी! खा ले।" उसने रोटी खाई और शाम को ही बुखार उतर गया।

---

चले गये थे जहाँ मारवाड़ी रिलीफ सोसायटी आदि संस्थाओं के माध्यम से चिकित्सा सेवा करते रहे।

१. डॉ० शर्मा भारत प्रसिद्ध रेडियोलोजिस्ट हैं। कलकत्ता में इन्होंने इको एक्स-रे-एण्ड इमेजिंग इन्स्टीट्यूट स्थापित की है। वर्तमान में आप कलकत्ता के "शेरिफ" हैं।

## २५

वि० सं० १६८१ की बात है कि चूरू के मंत्रियों की छतरी में एक बार श्री भानीनाथजी के पास कई सेवक बैठे वृक्ष लगाने की चर्चा कर रहे थे। इसी बीच भानीनाथजी बोले, "मैं तो काल स्यूं ही गाछ (वृक्ष) लगाणा सरू करस्यूं।" उन्होने अपनी घोषणा के अनुसार दूसरे दिन से ही पेड़ लगाने शुरु कर दिए। उन्होंने शीतला मन्दिर से कोसी धोरे तक वृक्ष लगाये और अपने कन्धे पर पानी का घड़ा लेकर वृक्षों की सिंचाई करते रहे। इस प्रकार वहाँ कई वृक्ष लग गये। उन्हें इस प्रकार पानी सींचते हुए देखकर कई सेवकों ने उनका श्रम घटाने के लिए कहा, "बाबा, गाछां में पाणी म्हे घला देस्यां।" भानीनाथजी ने उत्तर दिया, "थे घलाओ तो थारा और गाछ लगाओ, आं में तो मैं ही पाणी घालस्यूं।"

वे कहा करते थे कि एक पेड़ लगाने पर एक धर्मशाला बनवाने से ज्यादा पुण्य होता है। धर्मशाला के तो लोग ताला लगा देते हैं पर पेड़ के ताला नहीं लगता।

## २६

चूरू का धन्नाराम नायक रेलगाड़ी से दिल्ली जा रहा था तो भानीनाथजी उसे प्लेटफार्म पर मिल गये। धन्नाराम ने जय श्री नाथजी कहकर उनसे पूछा, "बाबाजी, दिल्ली चलेंगे क्या?" बाबाजी बोले, "देखस्यां।" इतने में गाड़ी रवाना हो गई। धन्नाराम ने रेल के डिब्बे में बैठे हुए उन्हें प्लेटफार्म पर खड़े देखा तो सोचा कि बाबाजी प्लेटफार्म पर ही रह गये, रेलगाड़ी में नहीं चढ़े। जब गाड़ी दिल्ली स्टेशन पहुँची तो बाबा को वहाँ खड़े देख कर चकित रह गया। वह कुछ कहने को हुआ कि उससे पहले ही भानीनाथजी बोले, "धन्ना! म्हारी गाड़ी दूसरी है, वा तेज चालै।"

## २७

चूरू के श्री शिवभगवान बियाणी को एक बार दस्त लगने लगे। दवा से कोई फायदा नहीं हुआ। एक दिन श्री भानीनाथजी झोली लेने उनके घर आये तो शिवभगवान ने कहा, "बाबा! टट्टी मोत लागै है।" नाथजी बोले, "भांग छोड़ दे।" शिवभगवान ने पूछा कि भांग तो टट्टी बन्द करती है? नाथजी ने उत्तर दिया, "तूं वैद है तो म्हानैं क्यूं पूछै है? फिर दोहराते हुए कहा, "दस्त बन्द करणा है तो भांग छोड़।" भांग छोड़दी तो दस्त काबू में आ गये।

## २८

चूरू के सेठ जमनाधरजी मंत्री' का लड़का चिरंजीलाल २०-२५ दिनों से मियादी बुखार से पीड़ित था। दवा-पानी से कोई फायदा नहीं हुआ। एक दिन भानीनाथजी झोली लेने आये तो जमनाधरजी ने कहा, "बाबा! चिरंजी को बुखार कोनी उतरै।" नाथजी ने उत्तर देते हुए कहा, "छोरै की बुखार कियां उतरै, गर्म दवायां दे-देकर ई को कालजो फूंक दियो, ई नै ठण्डो पाणी अर दही की लस्सी देवो।" उसी समय ठण्डे पानी के साथ दही की लस्सी बनाकर पिलाई गई। बुखार उतर गया।

## २६

चूरू के मंत्रियों की छतरी में जहाँ श्री भानीनाथजी रहते थे, सातड़ा का चौधरी चतराराम भानीनाथजी के लिए एक दिन काकड़िया-मतीरा लाया। उन दिनों चूरू में भी रूई का सट्टा खूब चलता था। उस दिन आसोज सुदि पूर्णिमा थी। शाम को बम्बई में 'ड्यू' कटने वाली थी। तारों में रूई का भाव ४२२ चल रहा था। शाम को कटने वाली 'ड्यू' की धारणा एक-दो रुपये तेजी-मन्दी अर्थात् ४२१ या ४२३ की थी।

काकड़िया-मतीरा एक ओर रखकर चतराराम भानीनाथजी के पास बैठ गया। नाथजी ने चौधरी की पीठ पर हाथ से थपकी देनी शुरू कर दी और थपकी के साथ कहने लगे, "सुण रै भाई चतरा, कै सोळा कै सतरा।" यह सुनकर वहीं पर बैठे दौलतराम खेमका, श्रीकृष्ण गोयनका और नन्दू नाई भागकर गुदड़ी बाजार गये और उन्होंने १६-१७ के दोनों दड़े लगा दिये। 'ड्यू' १६ कटी। इन लोगों ने इस सौदे में अच्छे रुपये कमाये।

## ३०

ग्राम हरपालसर (त० सरदारशहर) के श्री सूरजमालसिंह राजपूत एक बार पागलपन के शिकार हो गये। काफी इलाज कराया, पर ठीक नहीं हुए तो उन्हें लोहे की सांकल से बाँधकर श्रीभानीनाथजी के पास लाया गया। उन्हें देखकर भानीनाथजी बोले, "ईं नै दही पावो, ठीक हो ज्यासी।" दही पिलाने से वे ठीक हो गये।

# ३१

चूरू में रविप्रकाशजी शर्मा के पुत्र रुक्मानन्द एक साल की अवस्था में एक दिन तेज बुखार से बहुत पीड़ित हो गये। संयोग से श्री भानीनाथजी झोली लेने गये और अलख जगाकर रुक्मानन्द की माँ को रोटी लाने के लिए कहा तो वह बोली कि बाबाजी! लड़के के बुखार तेज हो गया है, मैं तो इसे गोदी से अलग नहीं कर सकती। तब भानीनाथजी बोले, "ई नै दही चटा, ठीक हो ज्यासी" और दही चटाने पर बुखार उतर गया।

# ३२

बीदासर के सुनार श्री नारायणचन्द का एक वर्षीय पुत्र बुधमल एक बार बहुत बीमार हो गया। नारायणचन्द श्री भानीनाथजी के पास लड़के को लेकर आये और रुंधे गले से कहने लगे- बाबाजी! लड़का बहुत बीमार है, बचने का कोई उपाय नहीं दीखता। तब भानीनाथजी बोले, "बावळा! ओ तो मैरै सैं ज्यादा उमर को होसी।" लड़का ठीक होगया और अब वह ५५ वर्ष की आयु में बिल्कुल भला चंगा है।

# ३३

एक बार भानीनाथजी भ्रमण करते हुए रतनगढ़ तहसील के गाँव खुडेरा बड़ा में से होकर जारहे थे तो एक स्त्री अचानक इनके पास आकर रोने लगी। पूछने पर बोली- "बाबाजी! मैरै कोई टाबर कोनी।" बाबा बोले, "होज्यासी, रो मत।" दो एक साल में उसके एक लड़का हो गया और उसके बाद एक लड़की हो गई। वह स्त्री मोहनसिंह राजपूत के घरवाली थी। आज उसके पोते-पोती सब ठाट से हैं।

# ३४

चूरू के श्री सुन्दरराम खाती निःसन्तान होने से बड़े चिन्तित रहते थे। एक दिन वे श्री भानीनाथजी के पास आकर बोले, "बाबाजी! मेरै कोई टाबर कोनी।" भानीनाथजी ने पूछा, "के काम करै है?" वे बोले, "सोनै का गहणा बणाऊँ हूँ।" तब नाथजी ने कहा, "सोनै को काम छोड़ दे, काठ को काम कर।" सुन्दरराम ने काठ का काम करना शुरु कर दिया तो उसके बाद उनके तीन लड़के हो गये- घींसाराम, भैराराम और फत्ताराम।

# ३५

सरदारशहर में एक पूलासरिया महाजन परिवार में जमनाबाई की लड़की आग से बुरी तरह जल गई। सभी घरवाले बहुत चिन्तित हुए। डॉक्टर को बुलाया तो उसने देखकर दवा का पर्चा लिख दिया और कहा कि दवाई लगाओ, कई दिनों में ठीक होगी। उस दिन संयोग की प्रबलता ही समझिए, भानीनाथजी जो यदा-कदा सरदारशहर जाया करते थे वे वहाँ आ गये। घरवालों ने प्रार्थना की कि बाबा, लड़की बहुत जल गई है, क्या करें? तब भानीनाथजी बोले, "सारै शरीर पर देसी खांड बुरकावो।" खांड बुरकाने से लड़की एक हफ्ते में ठीक हो गई। सब लोग कहने लगे कि यह तो बाबा की दया से ही ठीक हो गई।

# ३६

चूरू के श्री मुरलीधर खेमका की तीन पत्नियाँ गुजर गईं। उनसे दो लड़कियाँ हुईं, कोई लड़का नहीं हुआ तो चौथा विवाह कर लिया। कुछ दिनों बाद चौथी पत्नी भी बहुत बीमार हो गई। डॉक्टर-वैद्यों ने उत्तर दे दिया।

मुरलीधर दौड़कर श्री भानीनाथजी के पास छतरियों में गये और रोते हुए बोले, "बाबा! मेरो के हाल होसी, चौथी लुगाई नै मरण हालत में छोड़कर आपकी शरण में आयो हूँ।" तब भानीनाथजी बोले, "भागज्या; कोनी मरै; बेटो होसी; रो मत।" मुरलीधर ने घर आकर देखा कि घरवाली ने होश कर लिया है और उसकी हालत ठीक है। बाद में उनके दो लड़के हो गये और परिवार सम्पन्न भी हो गया।

## ३७

चूरू के श्री मदनलाल भाऊवाला के दाँतों में बहुत दर्द रहता था। सब तरह की दवाई (देशी, अंग्रेजी, मंजन, दातुन आदि) काम में ली परन्तु कोई फायदा नहीं हुआ। एक दिन श्री भानीनाथजी झोली लेने उनके घर आये तो मदनलालजी ने कहा कि बाबा, दाँतों का दर्द इतना बढ गया है कि रोटी खानी भी मुश्किल हो गई है। तब भानीनाथजी बोले, "बारीक बाळू रेत को मंजन कर्या कर, ठीक हो ज्यासी।" बालू रेत का मंजन करना शुरु किया तो दाँतों का दर्द गायब हो गया। फिर तो ६० साल की आयु तक दाँत वैसे ही रहे।

## ३८

चूरू के श्री मदनलाल भाऊवाला के लड़के पुरुषोत्तम के पैरों में दाद हो गये। देशी दवा की, डॉक्टर की दवा खाई और लगाई परन्तु कोई फायदा नहीं हुआ। श्री भानीनाथजी सदा की तरह झोली लेने के लिए आये तो पुरुषोत्तम ने उनसे कहा कि बाबाजी, दाद के दर्द से मरना अच्छा है, मैं इससे बहुत दुःखी हो गया हूँ। तब भानीनाथजी बोले, "अरे, बावळा! उपाय बताऊँ- अजवाण नै आक कै दूध में भिगोदे, एक दिन बाद पीसकर चूटिये (मक्खन) कै सागै लगा।" ऐसा ही किया गया और दाद हमेशा के लिए मिट गये। पुरुषोत्तम आज बम्बई में स्वस्थ और प्रसन्न हैं।

## ३६ ।

श्री भैरूंदानजी बियाणी, चूरू से दिनांक २७ अक्टूबर, १६६८ को सम्पर्क किया गया। उन्होंने श्री भानीनाथजी के सम्बन्ध में कई प्रसंग सुनाए जिनका विवरण निम्न प्रकार है:-

मेरी लड़की मैना का कद औसत से कम था। उसकी पीठ की हड्डियाँ चौड़ी थीं, सगाई नहीं हो रही थी, हम सभी चिन्तित थे। एक दिन भानीनाथजी झोली लेने आये तो मैंने उनसे अपनी चिन्ता का कारण बतलाया। वे बोले- रामचन्द्र थिराणी झारियेवाला का लड़का भगवानदास है, उससे सगाई करदे। हमने उनसे सगाई की बात चलाई तो उन्होंने मैना को अच्छी तरह से देखभाल कर स्वीकृति दे दी। विवाह होगया और आज वह खूब मजे में है, पटना रहते हैं। मोटर, बंगला सब है। लड़के ठाठ से रहते हैं।

## ४० ॥

हमारे पड़ौसी भैरूंदान मड़दा के बेटे हरिप्रसाद के कान के पास कीड़ी-नगरा निकला। मड़दाजी ने जितना हो सका चिकित्सा कराई लेकिन ठीक नहीं हुआ। एक दिन उन्होंने मुझसे कहा कि आप के यहाँ भानीनाथजी महाराज झोली लेने आते है, आप उनसे पूछकर कोई रास्ता बतायें तो ठीक हो सकता है। मैंने भानीनाथजी महाराज से पूछा तो उन्होंने हरिप्रसाद को देखकर कहा- यह तो कीड़ीनगरा है, इस पर पुराने बाजरे का दलिया बांधो। वैसा ही किया गया और थोड़े ही समय में वह भला-चंगा हो गया।

## ४१ III

भानीनाथजी महाराज सदा नंगे पैरों ही जंगल व शहर में घूमा करते थे। मैं ही प्रायः उनके पैरों के कांटे निकाला करता था। एक रोज कांटे निकाल रहा था कि शिवप्रसादजी कोठारी[1] आये और उपालम्भ के स्वर में बोले कि महाराज, आप तो पेट भर छाछ और रोटी खाकर निश्चिन्त लेट रहे हो, लेकिन वर्षा नहीं हो रही है, गायें भूखी मर रही हैं, इनका भी कोई ध्यान है? भानीनाथजी ने कहा कि आज शाम तक खूब वर्षा होजायेगी। यह बात सब पर चौड़े होगई कि भानीनाथजी ने आज ऐसा कहा है। उस दिन नाली का भाव दो रुपये सैकड़ा का था। कई लोगों ने नाली के रुपये लगाये। शाम होते-होते आकाश मे बादल घिर आये, खूब वर्षा हुई और कई लोगों ने रुपये कमाये, मैंने भी रुपये कमाये।

## ४२ IV

मेरा छोटा भाई शान्तिप्रसाद भी सट्टा किया करता था और उसने ६-७ हजार रुपये सट्टे में खो दिये। उन दिनों ६-७ हजार रुपये भी बहुत होते थे। कोई उपाय न देखकर उसने मद्रास जाने के लिए बींटे बाँध लिए। भानीनाथजी महाराज आये तो मैंने उनसे कहा कि सानू तो आज मद्रास जा रहा है। उन्होंने पूछा कि मद्रास मे कौन है जो उसे रुपये देदेगा? उससे कह दो कि बींटे खोल दे। सट्टे में रुपये खोये हैं तो सट्टे में ही कमा भी लेगा। बींटे खोल दिये गये और सानू ने कुछ ही दिनों में ८ हजार रुपये कमा लिये।

---

१. चूरू में माहेश्वरी कोठारी भी हैं, ओसवाल कोठारी भी। शिवप्रसाद जी माहेश्वरी कोठारी थे।

## ४३ V

छोटा भाई शान्तिप्रसाद वाराचकिया (बिहार) रहा करता था। डॉक्टरों ने उसके फेफड़े की टी० बी० बतला दी। वह चूरू आया। भानीनाथजी झोली लेने आये तो उनसे कहा। उन दिनों टी० बी० का इलाज सहज नहीं था। लेकिन भानीनाथजी ने सानू के फेफड़ों आदि पर हाथ फिराकर कहा कि कहाँ है इसको टी० बी०? कौन कहता है कि इसके टी० बी० है? शान्तिप्रसाद स्वस्थ हो गया। कोई २० वर्षो बाद डॉक्टरों ने किसी प्रसंग में उससे पूछा कि क्या तुम्हें कभी फेफड़े की टी० बी० हुई है? तो उसने सहजभाव से कह दिया कि २० वर्ष पहले हुई तो थी लेकिन भानीनाथजी की कृपा से ठीक हो गई।

## ४४ VI

मेरे बड़े भाई शिवभगवानजी भी सट्टा करते थे और भांग भी खाने लगे थे। एक दिन भानीनाथजी आये तो उन्होंने कहा कि तू भांग क्यों खाता है? शिवभगवानजी ने कहा कि बाबा, सट्टे में रुपये लग जाते हैं तो भाग का नशा कर लेता हूँ ताकि घाटे को भूला रहूँ। अतिसार भी रहता है और यह भांग इस अतिसार को रोकती है। भानीनाथजी ने कहा कि तू जीना चाहता है तो भांग छोड़ दे। गौशाला जाकर दूध पिया कर। उन्होंने भांग खाना छोड़कर दूध पीना शुरु किया, स्वस्थ हो गये और कमाने के लिए कलकत्ता चले गये।

## ४५ VII

सदा की तरह हम कई लोग शाम को छतरियो मे बैठे थे। किशननाथजी ने भानीनाथजी से कहा कि फक्कड़, दूज का चॉद उग रहा है, देखकर बता कि यह साल कैसा निकलेगा। भानीनाथजी ने देखकर कहा कि महाराज! इस साल वर्षा तो खूब होगी, भूकम्प भी होगा। और ये दोनो बाते सत्य हुईं।

## ४६ VIII

एक रोज किशननाथजी ने भानीनाथजी से कहा कि हिंगलाज के दर्शन करने के लिए जाने का विचार है। देखकर बताओ कि वहाँ क्या स्थिति है? भानीनाथजी ने किसी दूरस्थ वस्तु को देखने के अन्दाज में देखते हुए बतलाया कि वहाँ तो छोटे-छोटे गोल-गोल सुन्दर पत्थर हैं, घुटनों से नीचे-नीचे तक पानी है, वृक्षों पर उल्टे चढने वाले जानवर दिखलाई पड़ते हैं।

कुछ समय बाद जासासरवाली बरजीबाई वहाँ आ गईं तो किशननाथजी ने उनसे भी वही प्रश्न किया। बरजीबाई ने एक मिनट कपड़े से मुँह को ढाँपकर उसी दिशा की ओर देखा और वही बात कही जो भानीनाथजी ने कही थी।

## ४७ I

श्री रामलालजी कुदाल से दिनांक ११ नवम्बर, १९९८ को सम्पर्क किया गया। उन्होंने श्री भानीनाथजी के सम्बन्ध में कई प्रसंग सुनाये, जिनमें दो इस प्रकार हैं:-

मेरे पिताजी (धनराजजी) तड़के जल्दी ही उठकर छतरियों में भानीनाथजी के पास जाया करते थे। एक रात तड़का समझकर सदा की तरह छतरियों की तरफ चल पड़े। रास्ते में गढ़ के घंटे के दो डके सुनाई पड़े तो उनको गलती का एहसास हुआ कि आज तो बडी रात रहते ही उठ आया। सुनसान रात के अंधेरे में वर्तमान पशु चिकित्सालय के निकट चिने हुए मोटे-ऊंचे खंभे को देखकर मन में भूत का भय व्याप्त होगया। ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते, बाईं तरफ खड़ा भूत सामने दिखाई देता। पसीना-पसीना हो गये और मुट्ठी बन्द कर राम-राम करते छतरियों की तरफ दौड़ कर आये। दरवाजा बन्द था। उन्होंने जोर से खटखटाया तो

भानीनाथजी ने ही दरवाजा खोला। पसीने मे लथ-पथ पिताजी के मुंह से निकल पडा 'भूत'। भानीनाथजी ने उनका हाथ पकड़कर कहा- 'ले चाल, तेरो भूत काढू' और वे उनको उस चिने हुए मोटे खम्भे के पास ले जाकर बोले- इसके हाथ लगा, यही है तेरा भूत। पिताजी की जान में जान आई।

## ४८ ॥

मेरी बहिन गायत्री चूरू के श्री चन्दनमलजी बहड़[1] के बड़े पुत्र महावीरप्रसादजी बहड़ को ब्याही हुई है। महावीरप्रसादजी के छोटे भाई रामनिवास अपने विवाह के बाद बहुत बीमार चल रहे थे। एक दिन गायत्री उनके सुस्वास्थ्य की कामना से नारियल लेकर वीर हनुमान मन्दिर की ओर जा रही थी कि रास्ते में छतरी से आते हुए भानीनाथजी मिल गये। गायत्री ने 'जय-श्रीनाथजी' कहकर उनका अभिवादन कर मन्दिर जाने का उद्देश्य बताया। उन्होंने कहा- बेटी, यो नारेळ तो कन्देड़ो है। गायत्री एक बार तो झिझकी, फिर हिम्मत बाँधकर मन्दिर की तरफ चल पड़ी। नारियल सचमुच गला हुआ निकला। कुछ समय बाद रामनिवास का देहान्त हो गया।

## ४९

श्री भानीनाथजी के अनन्य भक्त स्व० तोलारामजी पारख के पुत्र रावतमलजी पारख ने वृक्षों के संरक्षण के सन्दर्भ में उनका एक संस्मरण लिखा है जो साररूप में इस प्रकार है-

---

1. श्री सर्वहितकारिणी सभा के क्रियाकलापों में श्री चन्दनमलजी बहड की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। बीकानेर षड्यन्त्र केस के दौरान इन्हें भारी यातनाएँ दी गईं। बाद में इन्होंने ही सर्वहितकारिणी सभा के माध्यम से रात्रि कॉलेज का श्रीगणेश कर चूरू में कॉलेज शिक्षा का सूत्रपात किया। वर्तमान लोहिया कॉलेज की स्थापना में भी इनका सक्रिय सहयोग था। भारत की प्रधानमंत्री स्व० श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने इन्हें स्वयं अपने हाथों से स्वतन्त्रता सेनानी का ताम्र-पत्र भेंट किया था।

दिसम्बर का महीना था, तारानगर में कोई मंत्री आ रहे थे। इस सन्दर्भ में चूरू से नाजिम (एस०डी०एम०) व तहसीलदार कुछ कर्मचारियों के साथ दो मोटरों में तड़के ही तारानगर जा रहे थे। गौशाला से कुछ ही दूर आगे निकले होंगे कि किसी कारण एक मोटर खराब होगई तो सवारियाँ नीचे उतर आई। ठिठुराने वाली सर्दी थी, कर्मचारी आग तापने के लिए वृक्षों की रक्षा हेतु उनके चारों ओर लगे 'भींटखे' उतार कर जलाने लगे। आग की लपट देखते ही भानीनाथजी हाथ में कुल्हाड़ी लिए वहाँ दौडे आये और उनसे पूछा, 'भींटखा कयां वाळ्या?' श्री सागरमलजी मंत्री नियमित रूप से प्रातः भ्रमण करने उधर ही (फालरां तक) जाया करते थे उन्होंने नाथजी से कहा कि ये नाजिम साहब हैं और ये तहसीलदार साहब। उन्होंने दोनों अधिकारियों को भी नाथजी का परिचय देते हुए बतलाया कि ये वृक्ष इन्हीं के लगाये हुए हैं और ये ही जी-जान से इनकी सुरक्षा भी करते हैं। भानीनाथजी ने उनसे कहा, "जद नाजिम और तहसीलदार ही इयां भींटखा वाळसी, तो पेड़ां की रुखाळी कुण करसी?" इस पर नाजिम साहब ने नाथजी से माफी मांगते हुए कहा कि हम शीघ्र ही वृक्षों के नये भींटखे लगवा देंगे।

## ५०

चूरू के प्रसिद्ध वैद्य स्व० शान्त शर्माजी[1] के पुत्र वैद्य वृद्धिचन्दजी ने (दिनांक २५.१.६६ को) बताया कि मेरे बहनोई परमानन्दजी एक बार

---

१. शान्त शर्माजी सर्वहितकारिणी सभा के साथ बहुत पहले से ही जुड गये थे। सवत् १६७४ में बहुत भारी वर्षा के कारण भयंकर अकाल पडा जो अनेक प्रकार की जानलेवा व्याधियों को भी साथ लाया। उस समय शान्त शर्माजी और बड़े मन्दिर के महन्त गणपतिदासजी ने ऊँट की सवारी से चूरू व सरदारशहर तहसील के अनेक गाँवों में घूम-घूम कर २० दिनों तक हजारों रोगियों को दवा दी थी। इसी प्रकार अन्य सेवा कार्यों में भी ये उत्साहपूर्वक लगे रहते थे। शान्तजी वरिष्ठ चिकित्सक थे और कलकत्ता में भी इन्होंने वर्षों तक चिकित्सा कार्य किया था। पत्र-पत्रिकाओं में भी बराबर लिखते रहते थे। इनकी धर्म पत्नी कृष्णादेवीजी भी बड़ी निर्भीक महिला

पिलानी (झुंझुंनू) से चूरू आये। वे पिलानी में बिरला संस्थान के चीफ ऑडिटर के ऊँचे पद पर कार्यरत थे। गर्मी के दिन थे। चूरू में तो वैसे भी अधिक गर्मी पड़ती है। लगभग ४-५ वजे शाम को ऊमस अधिक होने से उन्होंने मुझसे कहा कि कहीं ऐसे रमणीक स्थान पर ले चलो जहाँ खुली हवा मिल सके। मैं उन्हें भानीनाथजी के मठ में ले गया। हमारे साथ श्री शंकरलाल खण्डवेवाला, श्री महावीरप्रसाद भावसिंहका और दि बैंक ऑफ वीकानेर के मैनेजर भी थे। सवसे पहले वहाँ श्री द्वारकानाथजी के दर्शन हुए। उनके ऊँचे कद, गौर वर्ण, बलिष्ठ शरीर तथा दिव्य ललाट को देखकर परमानन्दजी बडे प्रभावित हुए। वर्षा के लिए पूछने पर द्वारकानाथजी ने कहा, "थोडी देर पहली एक चूंखो (वादल का छोटा दुकड़ा) आयो हो वो भी चल्यो गयो, क्यांकी बिरखा आवै।" थोड़ी दूर चलकर वहां से कुछ दूर कई सेवकों के वीच वैठे भानीनाथजी की ओर संकेत करके मैंने कहा- वो चमत्कारी साधु हैं। परमानन्दजी ने धीमे स्वर में व्यंग्य से कहा- बो मुरदियो (दुवला-पतला) के? ओ क्यांको महात्मा है। वहाँ कई सेवकों के वीच वैठे भानीनाथजी को जय-श्रीनाथजी कहकर मैंने परमानन्दजी का परिचय कराया। बैठते ही परमानन्दजी ने कहा 'महाराज गर्मी बहुत पड़ै है, बिरखा कोनी कराओ के?' भानीनाथजी ने सहज भाव से कहा, "गर्मी तो मौसम सारू है, विरखा भी हो ही सी। थे लोग निमटा-नामटी (नित्य कर्म) कर आओ। लोटा ले ज्याओ बिरखा आऽसकै है, जल्दी आज्यायो, फेर बातां करस्यां।" सव लोग लोटे लेकर जंगल में निकल गये। थोड़ी दूर चलने पर ठंडी हवा का झोंका आया तो परमानन्दजी कहने लगे, "थारलै महात्मा कै भरोसै बिरखा तो माड़ी ही आवै, पण पून (हवा) जरूर ठण्डी आई।" थोड़ी देर में उत्तर-पूर्व दिशा की ओर काली-पीली आँधी सी नजर आई तो

थीं जो 'नेताजी' के नाम से जानी जाती थीं। सर्वहितकारिणी पुत्री पाठशाला में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। 'कलकत्ता समाचार' में प्रकाशित इनके एक पत्र को पढकर सेठ जुगलकिशोरजी विड़ला ने पाठशाला में पढने वाली दो विधवा महिलाओं को दो वर्ष के लिए छात्रवृत्ति प्रदान भी की थी (विशेष जानकारी के लिए नगर-श्री चूरू द्वारा प्रकाशित स्वामी गोपालदासजी वाली पुस्तक द्रष्टव्य है)।

मैंने कहा, जल्दी करो, वर्षा आणे सकै है। सभी लोग बातों में मशगूल थे, जंगल में चलते गये। इतने में घटा सिर पर आ गई और बूंदा-बांदी होने लगी। फिर तो बादल मूसलधार बरसने लगे और आधे घण्टे तक खूब बारिश हुई। सब लोग वर्षा से तरबतर हुए मठ में लौटे तो भानीनाथजी ने उनका हाल देखकर कहा, "घर भागो, विरखा और आऽसी।" सब लोग लोटे छोड़कर घर की ओर चले तो गौशाला तक पहुँचते-पहुँचते पहले से भी तेज वर्षा शुरू हो गई। सबको गौशाला के दरवाजे में शरण लेनी पड़ी। परमानन्दजी कहने लगे, "मानग्या, थारलो महात्मा तो खुदा ही है।"

## ५१ I

चूरू के श्री ऋद्धिकरणजी गोयनका से दिनांक १५.१२.१९९८ को सम्पर्क किया। उन्होंने बताया-

मेरे पिता स्व० बजरंगलालजी गोयनका[1] अपने साथियों- कनीरामजी कोठारी, तोलारामजी मंत्री, भैरूंदानजी बियाणी और तोलारामजी पारख के साथ प्रतिदिन सुबह-शाम भानीनाथजी के पास मंत्रियों की छतरी में जाया करते थे। उन दिनों चूरू में रूई, चाँदी और बरसात के सट्टे खूब हुआ

---

१. गोयनका परिवारों में भक्तराज जयदयालजी गोयनका का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने गोरखपुर में गीताप्रेस की स्थापना की थी जहाँ से इतनी विपुल मात्रा में धार्मिक साहित्य प्रकाशित हुआ है उतना शायद ही कहीं से प्रकाशित हुआ हो। कल्याण मासिक पत्र का प्रकाशन अभी भी हो रहा है। चूरू का ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम तो इन्हीं की देन है। चूरू का मोतीराम गोयनका राजकीय सीनियर सैकण्डरी स्कूल तथा चूरू का टाउन हाल गोयनका परिवार की ही देन है। विपश्यना (साधना-पद्धति) में विख्यात डॉ० सत्यनारायणजी गोयनका को अन्तरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त है। चूरू की सुप्रसिद्ध संस्था सर्वहितकारिणी सभा के निजी भवन का शिलान्यास यहीं के [illegible] गोयनका द्वारा दिनांक १० अक्टूबर, १९१८ को हुआ था। नारायण दातव्य औषधालय का संचालन इसी परिवार द्वारा वर्षों तक किया गया था। श्री शिव भगवान गोयनका आज भी चूरू [illegible] ट्रस्ट के संस्थापक ट्रस्टी हैं। डॉ० [illegible] गोयनका को राय साहब की पदवी थी। इनके छोटे भाई निरंजनलाल गोयनका द्वारा लिखित कई पुस्तकें [illegible] हैं। चूरू के कई घरों में [illegible] गोयनका [illegible] में [illegible] था।

करते थे। पिताजी भी सट्टा करते थे। वे सट्टे में लगभग बारह-तेरह हजार रुपये खो चुके थे इसलिए चुकारे की चिन्ता में रहते थे। सावन सुदि ११ की बात है, पिताजी अपने साथियों के साथ भानीनाथजी के पास उदास-मन बैठे थे तो भानीनाथजी ने पूछा, 'बजरंग आज उदास कियां बैठ्यो है?' उन्होंने जवाब दिया, महाराज, कोई खासबात कोनी। तोलारामजी मंत्री ने कहा, 'महाराज, यो सौदे में भोत रुपिया गवां बैठ्यो, आ' ही उदासी है।' भानीनाथजी ने कनीरामजी कोठारी की ओर देखकर कहा, 'कान गुरु, कीं थे सारो देवो, कीं म्हे देस्यां, बजरंगो उदास नहीं रहणो चाये।' पिताजी को उनके वचनों पर विश्वास था। बरखा के तीन खाळे सही हो चुके थे। चौथे खाळे के सही होने की कोई उम्मीद नहीं थी, फिर भी पिताजी ने भानीनाथजी की बात पर विश्वास करके चौथे खाळे के रुपये लगा दिए। तीसरे दिन खाळा सही हो गया और उनके १५ हजार रुपये आये। सारा कर्ज चुकती हो गया।

## ५२ II

आज से ५२ वर्ष पहले जब मेरे दूसरे पुत्र सुरेश कुमार का जन्म हुआ तब उसकी माँ (गीतादेवी) जापे में बहुत बीमार हो गई। भानीनाथजी जब झोली लेने आये तो मेरी माताजी ने कहा- 'बाबाजी, बीनणी भोत बीमार है, जापे में सूती है, खाणो-पीणो बन्द है, कियां पार पड़सी?' भानीनाथजी बोले- क्यूं चिन्त्या करै, ठीक होकर या तो तेरै सैं झगड़ो करसी। उन्होंने अपनी झोली में से रोटी का एक टुकड़ा दिया और कहा- उसे खिलादे। पत्नी से रोटी का टुकड़ा खाया नहीं गया तो उसे सिरहाने रख दिया। दूसरे-तीसरे दिन उसने खाने के लिए रोटी मांगली और वह जल्दी ठीक हो गई।

## ५३ III

मेरा दूसरा पुत्र सुरेशकुमार जब दो-तीन वर्ष का ही था कि उसके 'नळों' में भयंकर फोड़ा हो गया। डॉक्टर से सलाह ली तो उन्होंने कहा- इसका तो ऑपरेशन करना पड़ेगा। डॉक्टर ने अगले दिन शाम को अस्पताल लाने की सलाह भी दी। मैंने माँ को ऑपरेशन की बात बताई तो उसे बड़ी चिन्ता हुई। वह उसी शाम बहू और पोते को साथ लेकर भानीनाथजी के पास गई और बच्चे को दिखाया। फोड़े को देखकर भानीनाथजी ने कहा कि कबूतर की वींठ पीसकर बाजरी के दलिए में मिलाकर ई पर बांध दे, ठीक हो ज्यासी। घर आकर ऐसा ही किया गया और दूसरे दिन शाम को ४.०० बजे से पहले ही फोड़ा फूट गया। मवाद निकलने से बच्चे को काफी राहत मिली। अब तो डॉक्टर के पास जाने की क्या आवश्यकता थी? ऑपरेशन तो नाथजी ने कर ही दिया था। बच्चा थोड़े दिनों में ठीक हो गया।

## ५४ IV

मेरे बड़े भाई श्री नोपचन्दजी की पत्नी गोदावरी देवी के ढुगरे (नितम्ब) में मवाद पड़ने से वह मरणासन्न हो गई। इस भयंकर व्याधि के बारे में भानीनाथजी को बताया तो उन्होंने कहा- जांटी को छोड़ो बाळकर बीं नै पीसले और गुड़ कै सागै मिलाकर बीं का छोटा-छोटा लाडू बणाकर बांध ले। ऐसा ही किया, जहाँ तीन लड्डू बांधे थे वहाँ तीन छेद हो गये और मवाद निकल गया। कुछ दिनों में वे ठीक हो गईं।

## ५५

चूरू के लूणजी (लूणकरणजी) गोयनका ने दिनांक २२.२.६६ को बताया कि मेरे स्व० पिता भूरामलजी एक बार दक्षिण में रामेश्वरम् की तरफ नारियल खरीदकर चूरू के लिए लदान कराने गये थे। उनके गये

दो-अढ़ाई माह वीत गये। न खुद आये और न कोई चिट्ठी पत्री। हम सव घरवाले चिन्तित हो गये। सवके चेहरो पर उदासी रहने लगी। एक दिन भानीनाथजी झोली लेने आये तो वहिन सरस्वती को खिन्न देखकर पूछा, 'छोरी आज उदास कियां?' सरस्वती रुंधे गले से वोली, "वावोजी, वापूजी नै गयां घणां दिन होगया, अव ताणी कोनी पहुँच्या, न कोई वांको समाचार है।" इतना कहने ही उसकी ऑखो में ऑसू छलक आये। भानीनाथजी ने उसके सिर पर हाथ फेरकर कहा, "चिन्त्या मत कर, आज पूग ज्यासी।" सचमुच, रात्रि की गाडी से पिताजी चूरू पहुँच गये। सवके चेहरों पर रौनक आ गई।

## ५६

चूरू के अध्यापक श्री सत्यनारायण कानोड़िया (माली) ने दिनांक १०.३.६६ को बताया कि मेरी माँ के कथनानुसार मेरा तो जन्म ही भानीनाथजी की कृपा का फल है। मेरी चार बडी बहिनों के बाद १५ वर्षो तक घर में कोई सन्तान नहीं हुई। मेरे पिता स्व० गोरखाराम भानीनाथजी के अनन्य भक्त थे। वे उनको प्रेम से गोरखनाथ कहा करते थे। वे एक दिन उदास मन भानीनाथजी के पास गये। उनकी उदासी भांपकर नाथजी ने पूछा "गोरखनाथ, आज उदास कियां?" पिताजी बोले, "बाबा, वेटै की तो मन में लेकर ही मरस्यां। अव कोई उम्मीद भी कोनी।" भानीनाथजी स्नेह से वोले, "जा रै बावळा, गीगलै की चिन्त्या करै? देख, म्हां मोडां कनै और तो कीं कोनी, आ राख लेज्या, एक चूंटी तूं खा लेई और एक चूंटी छोरी नै देदेई। जा, भागज्या।" पिताजी को भानीनाथजी की वात पर पूरा विश्वास था, इसलिए नाथजी ने जैसा कहा, वैसा ही किया। लगभग एक साल बाद मेरा जन्म हुआ। मेरे दोनो कानों पर जन्म से ही कान वींधने जैसे चिह्न हैं जवकि बचपन में मेरे कान नहीं विंधाये गये थे। माँ कहा करती थी, तू तो भानीनाथजी महाराज के वचन से ही जलम्यो है, तेरा कान तो विंध्या-विंधाया ही हैं। मैं आज पारिवारिक दृष्टि से सुखी, स्वस्थ एवं प्रसन्न हूँ, यह सव नाथजी महाराज की कृपा है।

चूरू के स्व० छोगजी नाई के छोटे भाई चम्पालाल नाई ने दिनांक २३.११.६८ को बताया कि एक बार मैं सौदे में ५०-६० रुपये खो बैठा। उस जमाने में मेरे लिए यह रकम बहुत बड़ी थी। घरवालों से छिपकर सौदा करने से उधार भी नहीं ले सका और इस प्रकार मांगने वालों का चुकारा मुश्किल होगया। एक दिन भैरूंदानजी दायमा के घर के पास भानीनाथजी महाराज झोली लाते मिल गये। मन में आया नाथजी को दुखड़ा सुनाकर उपाय पूछूं, किन्तु हिम्मत नहीं पड़ी। रात्रि को स्वप्न मे भानीनाथजी के दर्शन हुए। मानो मुझे कह रहे थे, मठ कानी आई। दूसरे दिन सवेरे ही भानीनाथजी के पास गया। उन्होंने मुझे अलग बुलाकर कहा, "तूं मजूरियो आदमी, ओ के धन्धो पकड़्यो है? आज-आज तो तेरै जचै सो सौदो कर लेई पण काल स्यूं सोदो-सट्टो सदां वास्ते छोड़ देई।" मैंने नाथजी का आदेश शिरोधार्य कर लिया किन्तु नाथजी द्वारा आज-आज की छूट का लाभ उठाने के लिए सट्टा बाजार गया और ३४ का दड़ा लगाया। इसमें सैकड़ों रुपये आये और मेरी सारी मांगत चुकती हो गई। उस दिन के बाद मैंने आज तक सट्टा नहीं किया। सचमुच नाथजी महाराज ने मुझे उबार लिया।[1]

## ५८

चूरू के धनजी नाई के पुत्र गजानन्द ने दिनांक १२.३.६६ को बताया कि श्री मोतीलालजी चौधरी (टांडूइञ्जीवाला) के यहाँ विरत होने से मैं प्रायः उनकी हवेली जाया करता था। सेठजी का रंगून में व्यापार था।

---

१. भानीनाथजी महाराज आखर-दडा बताने वाले संत नहीं थे और वे सौदा-सट्टा करनेवालों को सदा ही मना किया करते थे। फिर भी सट्टा करने की आदत से मजबूर घाटे में फँसा कोई आतुर उनके पास आ जाता तो वे अपने साधु स्वभाव के कारण उसका कष्ट निवारण भी कर दिया करते थे।

एक बार मैंने उनसे रंगून दिखाने की प्रार्थना की तो उन्होंने पासपोर्ट नहीं बन सकने का कारण बताकर बात टालदी। रंगून जाने की मेरी इच्छा बड़ी प्रबल होती गई। एक दिन सुँआर (हजामत) करते समय मैंने, यह बात भानीनाथजी से कही तो उन्होने कहा कल झोली लेने जाऊँगा तब सेठ को कहदूंगा। भानीनाथजी ने दूसरे दिन सेठ को कह दिया कि आज ही रंगून चला जा। साथ में गज्जू नाई को भी लेजा। उसी दिन सेठजी की मेरे पास सूचना आई कि आज ही तुम्हें मेरे साथ रंगून चलना है। मैं खुशी-खुशी नारियल बधारने तथा भानीनाथजी का आशीर्वाद लेने मठ में गया तो वे बोले, 'रंगून तो चल्यो जा, पण तू आसी जद म्हे कोनी लादां।' मैं नाथजी के आशीर्वाद से उसी दिन सेठजी के साथ रंगून चला गया। वहाँ जाने पर उन दिनों सेठजी ने खूब कमाई की और मैंने भी खूब मौज उड़ाई। तीन वर्ष बाद मैं रंगून से चूरू लौटा तो पता चला कि भानीनाथजी तो मेरे पहुँचने के १५ दिन पूर्व ही देह त्याग चुके थे। इस प्रकार भानीनाथजी महाराज ने जो वचन निकाले थे वे अक्षरशः सत्य हुए।

## ५६

. डॉ० लक्ष्मीनारायणजी होम्योपेथ ने दिनांक ३०.१०.६८ को बताया कि चूरू के गौरीदत्त सोनी एक बार बहुत बीमार पड़े। वैद्य-डॉक्टरों ने रोग को असाध्य घोषित कर दिया। गौरीदत्त का शरीर क्षीण होकर मात्र अस्थिपंजर ही रह गया। निराश होकर उनको भानीनाथजी के पास लेजाया गया। भानीनाथजी ने उन्हें द्वारकानाथजी के पास भेज दिया। द्वारकानाथजी ने भी रोग को असाध्य बता दिया तो लौटकर पुनः भानीनाथजी के चरणों में आ पडे। भानीनाथजी ने कहा, "जा, खाटे की रावड़ी और प्याजिया खा।" गौरीदत्त ने विश्वास कर खाटे की रावडी और प्याज खाने शुरू कर दिए। आश्चर्य, कि वे थोड़े दिनो में ही ठीक हो गये।

## ६०

डॉ० लक्ष्मीनारायणजी होम्योपेथ ने उसी दिन एक और प्रसंग सुनाया कि गौरीदत्त सोनी के पुत्र मोहनलाल सोनी एक बार सट्टे में काफी रुपये खोचुके थे। आर्थिक हालत बड़ी खराब हो गई। चारों तरफ रुपयों की तंगी से घिर गये। क्या करें, क्या नहीं की स्थिति में एक दिन जब भानीनाथजी झोली लाते रास्ते में मिले तो बड़ी व्याकुलता भरे शब्दों में भानीनाथजी के पैर पकड़ कर बोले, "बाबा, बचाओ। मैं पैसे से बुरी तरह टूट चुका हूँ।" भानीनाथजी ने उन्हें सांत्वना देते हुए कहा कि मनुष्य की जिन्दगी में कभी उन्नीस तो कभी बीस होती ही रहती है, इसलिए हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। मोहनलाल को तसल्ली हुई, और नाथजी के मुंह से उन्नीस-बीस का नाम सुनकर सट्टा बाजार गये और उन्नीस व बीस के दड़े लगा दिये। इसमें मोहनलाल के इतने रुपये आये कि सारा कर्जा चुकती हो गया।

## ६१

चूरू के सोहनलालजी बूंटियावाले[1] (केजड़ीवाल अग्रवाल) ने दिनांक ११.४.६६ को बताया कि मेरे पिता श्रीलालजी एक बार पेशाब सम्बन्धी

---

१. चूरू के निकटवर्ती गाँव बूटिया से आने के कारण वे बूटिया वाले कहलाते है। चूरू के सेठ भगवानदास बागला (बाद में राय बहादुर) का विवाह बूटिया के केजड़ीवाल परिवार में पोकरमलजी की बहिन ब्रजकुमारी के साथ हुआ था जो सेठानी के नाम से विख्यात है। अपने पति की स्मृति में इन्होंने चूरू के निकट भगवान सागर तालाब का निर्माण करवाया था जो स्थापत्य कला का उत्तम नमूना है और सेठानी के जोहड़े के नाम से जाना जाता है तथा यह चूरू के एक प्रमुख पर्यटन स्थलों में है। सेठानीजी ने कलकत्ता में भी अपने पति के नाम पर होस्पीटल का निर्माण करवाया था जिसका उद्घाटन भारत के गवर्नर जनरल और वायसराय लार्ड कर्जन की पत्नी लेडी कर्जन ने सन् १६०२ ई० में किया था।

चूरू के वरिष्ठ सस्कृत विद्वान ज्योतिषाचार्य एव भूगोल-खगोल के प्रकाण्ड पंडित मल्लिनाथजी चौमाल भी मूलतः इसी बूटिया गाँव के थे। इनके हस्तलिखित ग्रन्थ "कर्ण नवांकुर" को देखकर तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षा मत्री कालूलालजी श्रीमाली चकित रह गये थे। इनके मुद्रित ग्रन्थ 'मानव सस्कृति विज्ञान' के लिए कहा गया था

बीमारी से बड़े परेशान हो गये। शहर में उपलब्ध सभी प्रकार के इलाज कराये। किन्तु कोई फायदा नहीं हुआ। मेरी माँ (सरला देवी) उनकी बीमारी की चिन्ता से व्याकुल रहने लगी। एक दिन भानीनाथजी झोली लेने आये तो माँ ने अति अधीर होकर अपना दुखड़ा सुनाते हुए कहा, "बावोजी, खोटी बीमारी स्यूं आंको सारो शरीर छीजगो, औ चल्या जासी तो मेरो कुण धणी?" भानीनाथजी बोले, "बावळी इसी बात मतकर, तन्नै वेरो है के, पहली कुण जासी? चिन्त्या मत कर, नाथजी महाराज ठीक करसी।"[1] कुछ दिनों बाद वे तो ठीक हो गये किन्तु मेरी माँ बीमार रहने लगी और कुछ दिनों बाद वह चल बसी। माँ की मृत्यु के कुछ समय बाद पिताजी का भी देहान्त हो गया।

## ६२

चूरू के श्री गोविन्दजी अग्रवाल की धर्मपत्नी श्रीमती दुर्गादेवी ने दिनांक १०.४.६६ को बताया कि मेरे छोटे दादाजी चौथमल मेहरीवाले जब अफीम खाते तो दादीजी उन्हें मना करतीं। आये दिन वाद-विवाद से घर में कलह रहने लगी। एक दिन दादा-दादी दोनों झगड़ रहे थे कि भानीनाथजी झोली लेने आये। उन्हें झगड़ते देखकर नाथजी ने समझाया कि घर में शान्ति से रहो, लड़ाई झगड़े से कोई फायदा नहीं। किन्तु दादाजी अपनी बात पर अड़े हुए थे। वे खीजकर यह कहते हुए भानीनाथजी के पीछे हो लिए कि मैं तो अब यह घर छोड़कर आपके साथ ही चलूंगा। अब क्या था भानीनाथजी आगे और दादाजी उनके पीछे। भानीनाथजी ने बार-बार

---

कि यदि यह पुस्तक अग्रेजी में किसी पाश्चात्य देश में प्रकाशित होती तो नोबेल पुरस्कार की अधिकारिणी होती (देखिए- मरु- श्री शोध त्रैमासिकी वर्ष १ अंक १ अक्टूबर-दिसम्बर १९७१)।

१. चूरू के श्री ठाकुरमल शर्मा ने बताया कि श्रीलालजी चूंटियावाले तो भानीनाथजी द्वारा बताई गई छाछ-राबडी के इलाज से ठीक हुए थे।

समझाया कि मेरे पीछे मत आ, घर चला जा, किन्तु वे नहीं माने। शहर की गलियों से निकलकर जव वे मठ के रास्ते चल पड़े तो भी दादाजी उनके पीछे थे। चलते-चलते भानीनाथजी उनकी आँखों से अचानक ओझल हो गये। इधर-उधर देखा किन्तु दिखाई नहीं पड़े। थोड़ी दूर चलते-चलते अचानक आँखों के सामने एक भयानक डरावना दृश्य उपस्थित हुआ। उन्हें लगा (जैसा कि उन्होंने वाद में वताया) कि मानो कोई उनकी तरफ मुंह फाड़े मारने के लिए आरहा हो। दादाजी के पैर वहीं रुक गये, शरीर कांपने लगा, भय के मारे पसीना-पसीना हो गंये, ऑखों के आगे अंधेरी छा गई। कुछ क्षण बाद ऑखें खुलीं तो वहाँ कुछ भी न था। भयातुर होकर घर की तरफ लौट पड़े। आते ही उनको तेज बुखार हो गया जो चार-पाँच दिनों तक नहीं उतरा। अगली वार जव भानीनाथजी झोली लेने घर आये तो दादीजी ने कहा, "महाराज! आं कै तो वीं दिन स्यूं बुखार हो री है, ऊतरै ही कोनी, आप संभाळो।" भानीनाथजी ने अन्दर आकर दादाजी के माथे पर हाथ लगाया और कहा, "बुखार कठै है? खड्यो होर काम कर।" फिर क्या था, बुखार तो छू-मन्तर होगया।

## ६३

स्व० पं० रामेश्वरलाल जी के पुत्र खेमचन्दजी शास्त्री ने दिनांक ११.१२.६८ को वताया कि मैं मूल निवासी सातड़ा (चूरू) का हूँ इसलिए निकट की जानकारी होने से भानीनाथजी और द्वारकानाथजी की मुझ पर सदैव कृपा दृष्टि रही। द्वारकानाथजी सदैव भानीनाथजी का आदर करते और उनकी सलाह से ही कोई वड़ा काम हाथ में लेते थे। यहाँ तक कि कहीं वाहर जाते तो भी उनसे पूछ कर जाते। उनके सत्संग में कई प्रेरक प्रसंग सुनने को मिले हैं। एक वार द्वारकानाथजी ने वताया था कि सीकर के राव-राजा माधोसिंह ने साधुओं के एक मेले का आयोजन किया। अन्य दो साधुओं के साथ मैं (द्वारकानाथ) और भानीनाथजी सीकर की यात्रा पर

पैदल चल पड़े। काफी दूर चलने के बाद एक गाँव आया। मुझे भूख लग गई थी किन्तु भानीनाथजी से पूछे बिना गाँव में ठहर कर भोजन करने की बात गले नहीं उतर पा रही थी। ज्योंहीं हम गाँव की एक गली में से आगे निकले तो एक औरत कुएँ से पानी का घड़ा लाते हुए सामने मिली। उसने रुककर जयश्रीनाथजी कहकर अभिवादन किया और बड़े आदर भाव से भानीनाथजी से प्रार्थना की कि बाबाजी, भोजन का समय है, घर चलकर भोजन कर लें। मेरी बूढ़ी सास भी आपके दर्शन पाकर खुश होगी। भानीनाथजी ने एक बार मेरी तरफ देखा और फिर मुस्कराकर उससे कहा 'चाल भई, आज तो तेरै घरे ही खीचड़ो खास्यां।" इस प्रकार हम चारों साधु उस औरत के घर पहुँचे तो भानीनाथजी ने उससे पूछा, '"खाली खीचड़ो ही है' क और क्यूं लगावण भी है?" औरत ने कहा, "बाबाजी, दूध भी है।" आंगन में एक बड़े बर्तन को देखकर भानीनाथजी ने कहा, "आ' पराती माँज कर ल्या।" औरत ने जैसा आदेश मिला वैसा ही किया। बड़ी पराती में खीचड़ा परोस दिया, गर्म किया हुआ दूध भी डाल दिया। फिर भानीनाथजी बोले, "पींजरै में थोड़ो चूंटियो (मक्खन) पड्यो है, वो भी ल्या दे।" औरत ने चूंटिया लाकर दूध-खीचड़ी में डाल दिया। वह देख रही थी और विचार कर रही थी कि पराती में सारे साधु एक साथ ही भोजन करेंगे। इतना सब हो गया तो भानीनाथजी ने मुझसे कहा, "ले द्वारका, तूं तो खाले।" फिर औरत की ओर देखकर उन्होंने कहा, "तूं चिन्त्या मत कर, तेरै चूल्हे पर पड़ी च्यार रोट्यां में स्युं तीन म्हानै ल्यादे और थोड़ी राबड़ी भी ल्यादे।" इस प्रकार हम सबने भोजन करके तृप्ति का अनुभव किया। औरत की सास भी बड़ी प्रसन्न हुई। मेरे घट की बात भानीनाथजी जान गये थे।

दूसरे दिन जब हम मेले में पहुँचे तो राव-राजा ने पूछा आप साधुओं में कोई ऐसा साधु है जो हमारी हथिनी को बैठा सके? मैं शरीर में लम्बा-तगड़ा था इसलिए भानीनाथजी ने कहा, "द्वारका, तूं ओ काम करिया।" मैं उठा और हथिनी की सूंड पकड़कर एक ऐसा झटका दिया कि

उसने आगे के दोनों पैर ढाल दिए। यह देखकर राव-राजा वडे प्रसन्न हुए और बोले, "मांगो साधु महाराज।" मैंने कहा, "और तो के मांगां, आ हथणी ही देद्यो।" भानीनाथजी पास में ही बैठे थे, तुरत टोका, "तेरो भेजो खराब होग्यो, ई को के बाळसी?" फिर मुझे नकद राशि का पुरस्कार दिया गया। द्वारकानाथजी ने अन्त में कहा, वे घट की बात जानकर समय पर चेता देते थे।

## ६४

चूरू के श्री रामनारायण नाई ने दिनांक २१.४.६६ को बताया कि मैं अपने पिता गंगजी के छोटे भाई नन्दजी के गोद आया था। मेरे माता-पिता का भानीनाथजी के यहाँ बराबर जाना-आना रहता था। मेरे परिवार पर उनकी बड़ी कृपा रही है। जब मैं माँ के पेट में था तो भानीनाथजी ने पिताजी को कह दिया था कि यह तेरे घर नहीं रहेगा। जन्म से पूर्व ही चाचा के गोद जाने की बात तय हो गई। जन्म के बाद मुझे गोद दे दिया गया। मैं पाँच-छह वर्ष का हुआ तो मेरे कण्ठवेल होगई। चूरू के भरतिया-परिवार में हमारी विरत थी। मैं माता-पिता के साथ सेठजी के यहाँ रंगून चला गया। रंगून मे कई डॉक्टरों को दिखाया, किन्तु कोई इलाज नहीं बैठा। जब हम वापस चूरू आये तो मेरी कंठवेल बहुत फूल गई थी। एक दिन माँ के साथ मैं भानीनाथजी के आश्रम में गया। माँ ने नाथजी को मेरी कण्ठवेल दिखाई। उन्होंने देखकर मेरे एक थप्पड़ मारा। पीड़ा होने से मैं बहुत रोया। चोट पड़ने से वेल फूट गई। रस्सी (मवाद) निकल गई। भानीनाथजी ने माँ से कहा, "जा, लेज्या, ठीक होग्यो।" कुछ दिन बाद घाव ठीक हो गया और मैं आज तक इस व्याधि से मुक्त हूँ। उन्होंने कण्ठवेल के निशान को दिखाते हुए कहा कि इसने दुबारा कभी पीड़ित नहीं किया। नाथजी महाराज की कृपा से ही मैं आजतक उनके निर्देशानुसार श्यामजी भरतिया के मकान में बिना किराये निश्चिन्त बैठा हूँ।

# ६५

चूरू के श्री गोविन्दजी अग्रवाल ने बताया कि भैरूंदानजी बियाणी ने मुझे भानीनाथजी के सम्बन्ध में कई प्रसंग सुनाये थे जिनमें एक प्रसंग कालूजी सुनार का भी है। कालूजी भानीनाथजी के भक्त थे। प्रतिदिन उनकी सेवा में आया करते थे। उन्हें सट्टे की चाट लगी हुई थी। बार-बार सट्टा करते और हर बार पैसे लग जाते। बड़ी चिन्ता में रहते थे। घर की आर्थिक स्थिति सर्वथा लडखड़ा गई। वे सोचने लगे कि भानीनाथजी सब का संकट काटते हैं, तो मुझे भी पूछना चाहिए। एक दिन उन्होंने भानीनाथजी से कहा, "थे सगळां की आफत मेटो हो, क्यूंई मनै भी बताओ।" भानीनाथजी ने कहा, "काळू! म्हां मोडां कन्नै के है? सगळां नै भाग में लिख्यो ही मिलै है।" कालूजी ने कहा, "थे बताओ तो सरी, देखां कियां कोनी मिलै?" भानीनाथजी मुस्कराये और बोले, "तो काळू, आज बिरखा आऽसी, जा तन्नै कीं करणो है सो करले। "कालूजी वहाँ से तेजी से चल पड़े। वर्षा का कहीं कोई आसार नहीं था। बाजार में नाळी का भाव आठ आने सैंकड़े का था। कालूजी की अंटी में एक चवन्नी थी सो नाळी सही होने की लगा दी। फिर घर आकर पत्नी से कहा कि जल्दी से दस रुपयों की व्यवस्था बैठा। पत्नी रुपये लाने के लिए पड़ौसिन के पास एक बर्तन गिरवी रखने गई किन्तु उसने पाँच रुपये देने की बात ही स्वीकारी। वह घर लौट आई और उसने सारी बात पति को बताई तो उन्होने कहा, "जा, जोक्यूं मिलै सो ही लिया।" वह फिर पड़ोसिन के यहाँ गई तो पता चला कि वह बाहर गई हुई है। एक घण्टे बाद लौटी तो उसने उसे चार रुपये दिए। पत्नी ने कालूजी को चार रुपये पकड़ाये और कहा कि ये भी मुश्किल से मिले हैं। कालूजी रुपये लेकर शीघ्रता से घर से निकल पड़े। रास्ते में बूंदा-बांदी शुरू हो गई। सट्टा-बाजार में पहुँचने से पूर्व ही उन्हें सूचना मिली कि नाली तो सही होगई है। सुनते ही कालूजी ने माथा पीट लिया। दूसरे दिन भानीनाथजी ने पूछा, "क्यूं काळू! कीं कमायो के?" कालूजी ने अपनी राम-कहानी सुनाई तो भानीनाथजी ने कहा, "भई करम में लिख्यो लिख्यो ही मिलै।"

चूरू के स्व० पन्नालालजी कुदाल के पुत्र सत्यनारायण कुदाल (अधिकारीजी) ने दिनांक २३.४.९६ को बताया कि मैं कलकत्ता में ओंकारमलजी भरतिया के पुत्र गौरीशंकरजी की गद्दी में मुनीम का काम करता था। चूरू के इस भरतिया परिवार में भानीनाथजी महाराज के प्रति बड़ी श्रद्धा रही है। कोई विकट समस्या आने पर इस परिवार ने भानीनाथजी के निर्देशानुसार ही कार्य किया है। एक बार गौरीशंकरजी को लाखों रुपयों के एक कोर्ट केस में फंसा लिया गया। कई बार पेशियाँ हुई। अन्त में आसार ऐसे लगने लगे कि मुकद्दमें में हार ही होगी। गौरीशंकरजी ने बहुत बार भानीनाथजी की सेवा में जाने का मन बनाया था किन्तु वे कई कारणों से कलकत्ता छोड़कर चूरू नहीं आ सके। आखिर केस के फैसले का दिन आगया। नं० ७५, तुल्लापट्टी, कलकत्ता में कोठी के पहले तल्ले पर सीतारामजी भरतिया रहा करते थे और दूसरे तल्ले पर गौरीशंकरजी। उस दिन कोर्ट जाते समय गौरीशंकरजी ने अपनी पत्नी से कहा था कि आज भानीनाथजी महाराज यहाँ होते तो पहले ही बता देते कि कोर्ट का फैसला क्या होगा। उन्होंने चूरू न जासकने पर अफ़सोस भी प्रकट किया। पत्नी ने- "नाथजी महाराज सब ठीक करसी" कहकर उन्हें कोर्ट के लिए विदा किया। गौरीशंकरजी तो कोर्ट चले गये, किन्तु उनकी पत्नी चिन्ता में डूबी रहीं। सहसा उन्हें लगा जैसे भानीनाथजी नीचे से आवाज लगा रहे हैं। गौरीशंकरजी की पत्नी ने नीचे की ओर देखा तो उन्हें लगा मानो भानीनाथजी महाराज प्रत्यक्ष खड़े हैं और कह रहे हैं, "चिन्त्या मत कर, सब ठीक हो ज्यासी।" इतना कहकर वे अदृश्य होगये। दृश्य बड़ा विचित्र था, किन्तु इससे गौरीशंकरजी की पत्नी को बड़ी शान्ति मिली। उधर गौरीशंकरजी उस दिन सचमुच कोर्ट-केस जीतकर लौटे। वे बड़े प्रसन्न थे और यह खबर अपनी पत्नी को सुनाने के लिए आतुर भी, किन्तु कोठी में प्रविष्ट होते ही जब डाक देखी तो उन्हें चूरू का एक तार भी मिला कि

भानीनाथजी ने शरीर छोड़ दिया है। उनको बड़ा आघात लगा। वे तार लेकर पत्नी के पास गये तो पहले कोर्ट केस जीतने की और फिर भानीनाथजी के शरीर छोड़ने की खबर दी। सुख और दुःख की मिश्रित अनुभूति करती हुई उनकी पत्नी ने भानीनाथजी के दर्शन की आद्योपान्त कहानी सुना डाली। पति-पत्नी दोनों कृत-कृत्य होकर भावविभोर होगये। भानीनाथजी के प्रति हाथ जोड़े श्रद्धावनत दम्पति की स्थिति दर्शनीय थी।

## ६७

चूरू के उपरोक्त सत्यनारायण कुदाल (अधिकारीजी) ने ही आगे बताया कि मेरे चचेरे बड़े भाई श्री गोपीराम कुदाल युवावस्था में ही एक लम्बी बीमारी के शिकार हो गये। उनका शरीर क्षीण होकर हड्डियों का ढांचा मात्र रह गया। डॉक्टर ने टी० बी० रोग बता दिया, जो उन दिनों असाध्य समझा जाता था। एक दिन वे प्रातः घूमने के उद्देश्य से धीरे-धीरे कोसी-धोरे की ओर जा रहे थे कि शीतला मन्दिर के पास भानीनाथजी मिल गये। भाई गोपीराम ने 'जय श्रीनाथजी' कहकर उन्हें प्रणाम किया तो उनकी हालत देखकर भानीनाथजी ने पूछा, "छोरा, इत्तो माड़ो कियां होग्यो?" गोपीराम ने कहा, "बावोजी, पाजी बीमारी लागगी, अब तो मर्यां ही गैल छूटसी।" भानीनाथजी बोले, "अरै आ, तेरो कागलियो देखां।" गोपीराम ने मुंह फाड़कर अपने गले के अन्दर की स्थिति उन्हें दिखाई। देखकर भानीनाथजी बोले, "अरै, तेरो तो कागलियो गळग्यो, जा दूध-आम खाया कर, ठीक हो ज्यासी।"

आम का मौसम था, भाई गोपीराम ने उनके आदेशानुसार आम चूसकर ऊपर से दूध पीना शुरू किया तो थोड़े दिनों में ही वे बिल्कुल रोगमुक्त हो गये।

चूरू नाथाश्रम के वर्तमान महन्त देवीनाथजी ने बताया कि लगभग ४५-४६ वर्ष पहले की बात है, आश्विन शुक्ल-पक्ष प्रारम्भ हो गया था, खेतों में सिट्टे-मतीरे पकने लगे थे। भानीनाथजी चूरू से पश्चिम दिशा के गाँवों में सिट्टे-मतीरे खाने निकल पड़े। इन दिनों में प्रायः वे देहातों में रमण-भ्रमण के लिए चल पड़ते थे। उन्हें चूरू से गये एक दो दिन ही हुए होंगे कि एक रात देरी से आये और उन्होंने मठ का दरवाजा खटखटाया। दरवाजा खुलने की आवाज सुनकर द्वारकानाथजी ने पूछा, "कुण है?" उनको बताया गया कि भानीनाथजी आये हैं। द्वारकानाथजी बोले, "इत्ती रात गयां?" और इतना कहकर वे पुनः सो गये। भानीनाथजी आते ही अपनी कोठरी में चले गये और किवाड़ लगालिए। मुश्किल से ३-४ दिन व्यतीत हुए होंगे कि गाँव लधासर (तह० रतनगढ़) के किसी व्यक्ति ने मठ में आकर बताया कि भानीनाथजी हमारे गाँव मतीरे खाने आये थे किन्तु वहाँ एक जाट महिला ने अपने बीमार एवं चलने में अशक्त बच्चे को लाकर उनके चरणों में डाल दिया और कहने लगी, "महाराज, ईनै ठीक करके जावो।" भानीनाथजी ने बच्चे की हालत देखकर समझ लिया कि इसके प्राण बचने कठिन हैं, फिर भी अपने साधु-स्वभाव-वश उस औरत को बहुत समझाया और ढाढस बंधाया, किन्तु वह अपनी जिद्द पर अड़ी रही। आखिर उनको यह कहना पड़ा, "ले भई, अब तो तू चूरू पाछा भेजकर ही रहसी।" शाम हो चली थी, भानीनाथजी बिना मतीरा खाये ही तुरन्त वहाँ से चूरू के लिए रवाना हो गये। यह भी सुना कि वह बच्चा तो ठीक है पर भानीनाथजी को मतीरे खाये बिना ही चूरू लौटना पड़ा।

इस बात से मठ के साधुओं को ज्ञात होगया कि भानीनाथजी उस रात इसी कारण देर से आये थे। उसके बाद भानीनाथजी अपनी कोठरी से बाहर नहीं निकले और उन्होंने कुछ दिनों बाद (आसोज सुदी १० वि० सं० २०१०) वहीं शरीर छोड़ दिया।

इस घटना की पुष्टि चूरू के वयोवृद्ध भैरूंदानजी बियाणी, बाबा शंकरनाथजी, जासासर मठ के रतननाथजी और चूरू के गजानन्द नाई ने भी की है।'



# कतिपय विशिष्ट सन्दर्भ

जिन-जिन नाथ-मठों में हम गये, वहाँ के पीठाधीश्वरों ने भी श्री भानीनाथजी के प्रति पूरा सम्मान प्रदर्शित किया। नाथ-पंथ की माननाथी शाखा के प्रवर्तक श्री माननाथजी (मन्नाथजी) द्वारा टाईं ग्राम में स्थापित शाखा के आदि मठ में श्री भानीनाथजी का चित्र देखा तो झुंझुनूं मठ जिसमें श्री अमृतनाथजी जैसे प्रख्यात योगेश्वर हुए, में भी उनका चित्र लगा पाया।

श्री भानीनाथजी को अपना नाम चलाने की कभी आकांक्षा नहीं रही और शायद इसीलिए उन्होंने अपनी कोई शिष्य परम्परा कायम नहीं की। हाँ, यह बात अलग है कि उनके आदर्श साधु-जीवन से प्रभावित उनके कतिपय समसामयिक और परवर्ती नाथों के मन में भी उनके प्रति गुरु-श्रद्धा का भाव रहा।

लक्ष्मणगढ़ (सीकर) नाथाश्रम के वर्तमान विद्वान् पीठाधीश्वर श्री बैजनाथजी महाराज ने अपने गुरु-ग्रन्थ 'सहजयोगी संत श्री श्रद्धानाथजी महाराज' में इस ओर संकेत करते हुए पृ० ३६ पर लिखा है, "श्री भानीनाथजी महाराज अपने सरल जीवन और वाटिका प्रेम के लिए विख्यात थे। यद्यपि ये श्री श्रद्धानाथजी महाराज के गुरु नहीं थे लेकिन इनके मन में उनके प्रति गुरुभाव ही था। उधर श्री भानीनाथजी का भी उनके प्रति गहरा प्रेम था। चूरू में नाथ पथ का जो आश्रम है, वह श्री भानीनाथजी के त्याग और वैराग्य का फल है।"[1]

सरदारशहर नाथाश्रम के संस्थापक स्व० श्री सोमनाथजी यों तो श्री द्वारकानाथजी के शिष्य बतलाये जाते हैं, लेकिन वे श्री भानीनाथजी महाराज

---

१. सहजयोगी संत श्री श्रद्धानाथजी महाराज, प्रका० श्रीनाथजी महाराज का आश्रम (ट्रस्ट) लक्ष्मणगढ (सीकर) राजस्थान, वर्ष - १९९३ ई०।

को ही अपना गुरु मानते थे। देराजसर (तह० सरदारशहर) की बणी में सं० २०२१ वि० में उन्होंने जो नाथाश्रम बनाया था उसमें श्री भानीनाथजी की मूर्ति विशेष रूप से स्थापित की थी। पुनः सं० २०३२ में सरदारशहर में जो विशाल "सोमनाथाश्रम" बनाया उसमें निर्मित पाँच शिखर मन्दिरों में से प्रथम शिखर मन्दिर में श्री भानीनाथजी, श्री अमृतनाथजी व श्री किशननाथजी की मूर्तियाँ स्थापित हैं और गर्भगृह के द्वार पर लगे शिलापट्ट में लिखा है-

**श्री श्री १००८ बाबा श्री भानीनाथजी महाराज के शिष्य का मन्दिर**

**श्री श्री १०८ श्री सोमनाथजी महाराज ने संवत् २०३२ में बनवाया।**

इससे श्री भानीनाथजी महाराज के प्रति श्री सोमनाथजी की गुरु भावना स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

राजस्थान के इस थार मरुस्थल के तपोनिष्ठ संत और जन-जागृति के अग्रदूत स्वामी गोपालदासजी के मन में भी श्री भानीनाथजी के प्रति गहरा आदर भाव था। स्वामी गोपालदासजी ने १६०७ ई० में चूरू में श्री सर्वहितकारिणी सभा की स्थापना कर उसके माध्यम से जन-सेवा व जन-जागृति के जो श्लाघनीय कार्य किए उनकी मिसाल मिल पानी मुश्किल है।[1] इन्हीं कार्यों में विस्तृत गोचर भूमि का निर्माण भी एक अनूठा कार्य

---

१. सर्वहितकारिणी सभा की स्थापना के समय एक पुस्तकालय और वाचनालय भी खोला गया था जो चूरू नगर का प्रथम पुस्तकालय और वाचनालय था। महिला शिक्षा के लिए पुत्री पाठशाला व शिल्पशाला, हरिजन शिक्षा के लिए कबीर पाठशाला खोली गई थी। सभा में राष्ट्र-नेता लोकमान्य तिलक, लाला लाजपतराय एवं विपिनचन्द्रपाल के चित्र लगाने की खुफिया रिपोर्ट बीकानेर पहुँची तो वहा खलबली मच गई और राज्य के तीन उच्च अधिकारी आई.जी.पी. को साथ लेकर दिनांक ४.१२.१४ को चूरू पहुँचे और बड़ी सरगर्मी से तलाशियाँ ली गईं। उस समय भी वाचनालय में २२ पत्र-पत्रिकाएँ आती थीं। सन् १६१७-१८ में तो चूरू पर महामारियों का कहर बरपा हो गया था जिसमें लगभग २००० आदमी मर गये थे। इस कठिन समय में भी स्वामीजी और उनके साथियों ने बड़ा अनुकरणीय सेवा

था। आज तो पर्यावरण रक्षण की आवाज चारों ओर से उठ रही है लेकिन दूर द्रष्टा स्वामीजी ने उस समय ही इसकी आवश्यकता गहराई से महसूस कर ली थी और चूरू के तत्कालीन तहसीलदार हीरालाल आचार्य के भारी विरोध के बावजूद उन्होंने सम्पन्न सेठों के अर्थ सहयोग से राज्य द्वारा हजारों बीघा जमीन गोचर भूमि के लिए छुड़वाकर चूरू के धोळे धोरों को हरियाली से लहलहा दिया था।[1] जन-सेवा और जन-जागृति के पुरस्कार स्वरूप राज्य सरकार द्वारा जब उन पर राजद्रोह का मुकद्दमा चलाकर इन्हें जेल भेज दिया गया तब श्री भानीनाथजी ने ही इस गोचर भूमि के रक्षण एवं संरक्षण का कार्य संभाला था जिसे वे जीवन पर्यन्त संभाले रहे। इस सन्दर्भ में स्वामीजी के दो पत्र चूरू के स्व० रामवल्लभजी सरावगी के नाम लिखे नगर-श्री, चूरू के संग्रह में हैं जिनके सम्बन्धित अंश निम्न प्रकार हैं:-[2]

१. यह पत्र बीकानेर सेंट्रल जेल से स्वामीजी द्वारा लिखा गया है:-

भानीनाथजी को जयनाथजी की। आपका विचार बद्रीनारायण की यात्रा करने का है सो ठीक है। आपके वास्ते बीड़ की सेवा ही सब तीर्थों से बढ़कर है और आप खुद ही तीर्थ रूप हो।

---

कार्य किया था। चूरू का धर्मस्तूप एवं इन्द्रमणि पार्क श्री सर्वहितकारिणी सभा के उद्योग से ही बने थे। अनेक देहातों में कुएँ-कुण्ड बनवाये गये थे तथा उनका जीर्णोद्धार भी करवाया गया था। पजाब से आयात होने वाले गेहूं पर जगात लगाने का विरोध करने पर स्वामीजी और उनके कतिपय साथियों को गिरफ्तार करके जब बीकानेर भेज दिया गया था (१९३२ ई०) तब भानीनाथजी ने ही गोचर भूमि को संभाला था।

१. इस गोचर भूमि से सम्बन्धित दो शिलालेख तो आज भी बच रहे हैं। उनमें से एक चूरू के निकट हनुमानगढ़ी मन्दिर पर लगा है जिसके अनुसार १३७०।। बीघा तीन बिस्वा जमीन भावसिहका सेठों की ओर से गोचर भूमि के लिए पुण्यार्थ छुडवाई गई थी। दूसरा शिलालेख पीथाणा जोहडा पर लगा है जिसके अनुसार ३३०० बीघा जमीन बागला परिवार की ओर से छुडवाई गई थी। विशेष जानकारी के लिए नगर-श्री, चूरू द्वारा प्रकाशित 'पत्रों के प्रकाश में स्वामी गोपालदासजी का व्यक्तित्व एव कृतित्व' पुस्तक देखें- लेखक- गोविन्द अग्रवाल।

२. वही, पृष्ठ-२४१, २६०। स्वामी गोपालदासजी के कृतित्व से प्रभावित होकर अनेक वेलियों के रचयिता ग्रा० बडी सहनाली (तह० चूरू) के ठा० मुकनसिंहजी बीदावत ने डिंगलभाषा में 'गोपाल वेलि' की रचना की है जो अभी प्रकाश्य है।



योगीराज श्री किशननाथजी महाराज

२. दूसरा पत्र दिनांक २२.११.३८ को लक्ष्मण झूला से लिखा गया है:-

श्री भानीनाथजी तथा सब नाथों को मेरा हाथ जोड़कर जयनाथजी की कह देना और बीड़ में पालो तथा जांटी छांगना चाहे हैं सो इस बारे में मैं तो कोई भी राय नहीं दे सकूं। मैं तो बीड़ का मालिक श्री भानीनाथजी को समझता हूँ। वह कहें उसी तरह करना चाहिए, परन्तु श्री भानीनाथजी को नाराज करके अगर कोई काम किया तो खैर नहीं है। इस महात्मा साधु ने बीड़ की जो सेवा की है, कोई करने वाला पैदा नहीं हुआ है।

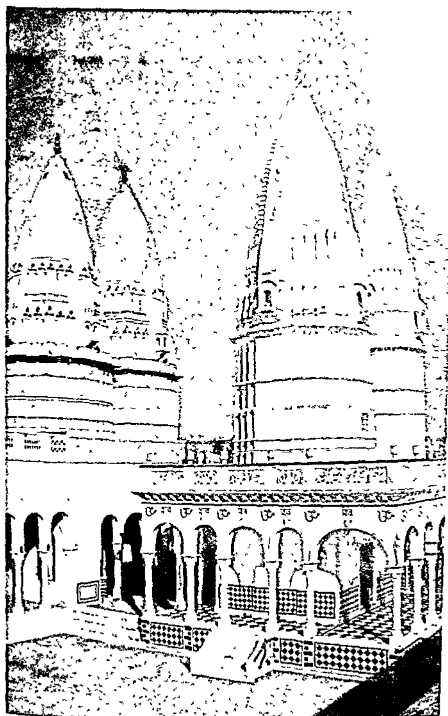
## श्री नाथाश्रम, चूरू

चूरू गौशाला के निकट से तारानगर जाने वाली सड़क के पश्चिम पार्श्व में ऊँचे टीलों पर बना चूरू का यह नव निर्मित नाथाश्रम दूर से ही बड़ा भव्य दिखाई पड़ता है। आज से लगभग ६०-७० वर्ष पूर्व यहाँ किशननाथजी एवं भानीनाथजी महाराज की कुटिया थी। चैत्र कृष्णा ५ वि० सं० १९९७ को किशननाथजी महाराज का देहपात हो गया। सम्भवतः इसके बाद इस नाथाश्रम के भौतिक निर्माण की प्रक्रिया शुरू हुई। आश्विन शुक्ला १ वि० सं०. २००० में चूरू के श्री राधाकिशन रामनिवास[1] बागला ने अपने पूजनीय स्व० सेठ गणपतरायजी रुक्मानन्दजी[2] बागला रायबहादुर की पुण्य स्मृति में एक कुआं बना दिया जिसका शिलालेखा लगा हुआ है। इसके निर्माण से जल की पर्याप्त सुविधा हो गई। वर्तमान में तो इसमें बिजली भी लग गई है। किशननाथजी महाराज तपस्वी साधु थे। चूरू के सेठ चिमनलालजी भरतिया की धर्मपत्नी श्रीमती बसन्ती देवी ने उनकी समाधि पर मिति माघ शुक्ला ५ वि० सं० २००० में एक शिखर मन्दिर बनवा दिया जिसमें आज भी अखण्ड दीप जलता रहता है। इसी निर्माण के क्रम मे चूरू के सेठ सीतारामजी भरतिया ने एक बड़े कमरे का निर्माण कराया

१. इनका कारोबार वर्मा में था। इन्हें 'केसरे हिन्द' की उपाधि मिली थी।
२. चूरू का इन्द्रमणि पार्क इन्होंने ही अपनी बेटी इन्द्रमणि की स्मृति में बनवाया था।

और इसके बाद तो चूरू के ही हरखचन्दजी कन्दोई ने इतना ही बड़ा एक और कमरा बना दिया। आश्रम में रहने की पर्याप्त सुविधा होने से मंत्रियों की छतरी में रहने वाले सभी नाथ इस नव निर्मित आश्रम में आकर रहने लगे। वि० सं० २०१० में जब भानीनाथजी महाराज का शरीरपात हुआ तो चूरू के श्यामसुन्दर भरतिया ने उनकी समाधि पर एक शिखर मन्दिर बनवा दिया जिसमें कालभैरव, अमृतनाथजी, ज्योतिनाथजी, किशननाथजी व भानीनाथजी की प्रस्तर मूर्तियाँ स्थापित हैं। इस अवधि में निर्माण-कार्य चलता रहा और द्वारकानाथजी महाराज की देख-रेख में आश्रम के पश्चिमी भाग में भी कई कमरे बन गये। इस बीच चूरू के जीवनरामजी पेड़ीवाल ने आश्रम के पूर्वाभिमुखी दरवाजे से नीचे उतरने के लिए ५२ पेड़ियों का निर्माण कराया जो पत्थर की बनी हुई हैं। पेड़ियों के दोनों ओर पर्याप्त चौड़ाई वाले संगमरमर के दासे लगे हैं जहाँ सोकर या बैठकर विश्राम किया जा सकता है। आश्रम के दक्षिणी भाग में एक दरवाजा और कई कमरे बने। इसी प्रकार पूर्वी भाग में भी निर्माण हुआ। श्रद्धालु लोग सहयोग देते रहे और द्वारकानाथजी महाराज निर्माण कराते रहे। ज्येष्ठ कृष्णा ११ वि० सं० २०४२ में द्वारकानाथजी महाराज का देहपात हो गया। उनकी समाधि पर सरदारशहर निवासी श्री भगवानदास महावीर प्रसाद जैसनसरिया द्वारा दिनांक ११ मई, १९९६ को शिखरमन्दिर बनवा दिया गया है। इस मन्दिर में द्वारकानाथजी की समाधि है तथा उनकी खड़ी प्रस्तर मूर्ति के अतिरिक्त शिवलिंग पर पंचमुखी शिव-मूर्ति है। किशननाथजी महाराज के शिखर मन्दिर के उत्तरी-पार्श्व में अब एक और शिखर-मन्दिर आश्रम की ओर से निर्मित हुआ है जिसमें अभी तक मूर्ति स्थापित नहीं हुई है। इस प्रकार आश्रम में चार ऊँचे शिखर-मन्दिर हैं।

आश्रम में किशननाथजी, भानीनाथजी, द्वारकानाथजी की समाधियों के अतिरिक्त रामनाथजी, शान्तिनाथजी, हीरानाथजी, डूंगरनाथजी, सुखनाथजी, कीर्तननाथजी और जवाहरनाथजी की समाधियाँ भी बनी हुई हैं।



श्री नाथाश्रम, चूरू

संझ्यानाथजी की समाधि के पास हनुमानजी, काली-माता व शिवजी की प्रस्तर मूर्तियाँ स्थापित हैं। आश्रम में चूरू के नाथ-भक्त कलाकार महादेवजी प्रजापत ने श्री द्वारकानाथजी की मौजूदगी में हनुमानजी, पंचमुखी महादेव, काल-भैरव आदि कई प्रस्तर मूर्तियाँ बनाई थीं। बाद में नाथजी की अनुमति से महादेवजी ने स्वयं अपनी हाथ जोड़े खड़ी प्रस्तर मूर्ति बनाकर आश्रम के पूर्वाभिमुखी द्वार के सामने सीढ़ियों के पास इस भावना से लगाई थी कि उन पर सदैव नाथजी महाराज की कृपा बनी रहे।

श्री द्वारकानाथजी महाराज के देहपात के उपरान्त आश्रम की सारी सार-संभाल उनके उत्तराधिकारी शिष्य वर्तमान महन्त देवीनाथजी महाराज कर रहे हैं। इनके कुल १६ शिष्य हैं जिनमें से कई तो अन्य नाथाश्रमों का कार्य संभाले हुए हैं तथा कुछ चूरू नाथाश्रम की व्यवस्था में संलग्न हैं। इन शिष्यों की नामावली पुस्तक में यथास्थान दे दी गई है।

आश्रम से शहर की ओर दक्षिण की तरफ सड़क से जुड़ने वाला मार्ग दर्शनार्थियों के आने-जाने का रास्ता है जिसका प्रवेश द्वार बड़ा भव्य है। आश्रम में बिजली-पानी की समुचित व्यवस्था है।

आश्रम के चारों तरफ विभिन्न प्रकार के सैकड़ों पेड़ लगे हुए हैं जिनकी हरियाली से आश्रम बड़ा सुहावना लगता है और इसकी हरियाली और स्वच्छता को देखकर दर्शक आनन्दित होते हैं। कृषि के लिए भी आश्रम के निकट पर्याप्त भूमि है।

भानीनाथजी महाराज को पेड़ लगाने और उनकी सुरक्षा करने का बड़ा चाव था। उन्होंने मंत्रियों की छतरी में रहते समय शीतला मन्दिर से लेकर कोसी धोरे तक सैकड़ों पेड़ लगाये थे जो आज भी पर्यावरण संरक्षण के प्रतीक बने हुए हैं। आश्रम के पूर्वाभिमुखी मुख्य द्वार के सम्मुख नीम के पेड़ एक सी ऊँचाई और गोल घुमावदार कटाई के कारण बड़े मन-मोहक लगते हैं। चूरू के दर्शनीय स्थलों की सूची में इस नाथाश्रम का विशिष्ट स्थान है।

## श्री द्वारकानाथजी

सातडा के चौ० रेखाराम (८२) के अनुसार द्वारकानाथजी सातड़ा के महर्षिया ब्राह्मण हेमाराम के पुत्र और न्योळाराम के पौत्र थे। हेमाराम के तीन पुत्र हुए- १. पन्नाराम २. पोपाराम ३. चन्द्राराम। दीक्षा के बाद चन्द्राराम का नाम द्वारकानाथ और पोपाराम का नाम संझ्यानाथ हो गया। संझ्यानाथजी ने कान नहीं चिराये थे। श्री द्वारकानाथजी के शरीर में बड़ा पौरुष था और कहा जाता है कि वे पानी मे भरे चड़स को कुएं से अकेले निकाल लेते थे। जबकि सामान्य तौर पर इसके लिए दो बैलों की जोड़ी काम मे ली जाती है। ये लगोट के सच्चे थे। श्री भानीनाथजी के कहने से अपने पुरात्व को तोड़ने के लिए बड़ी मात्रा में अजवाइन का सेवन किया करते थे। मत्रियो की छतरी मे उन्होंने अखाड़ा भी बना रखा था जिसमें युवको को कुश्ती करना सिखाया जाता था। नौरंगजी माली और मोहनलाल नोवाल (लठ-महाराज) ने कुश्ती में यहीं दक्षता प्राप्त की थी। कहते हैं कि द्वारकानाथजी को भैरूंजी सिद्ध थे। द्वारकानाथजी विभिन्न प्रकार की दवाइयाँ भी बनाते थे। ये दवाइयाँ संभवतः नाथ सम्प्रदाय में प्रचलित रस-ग्रन्थों के आधार पर बनाते थे जिनमें श्वेदन, मूर्छन, पातन, निरोधन, मारण आदि की विधियाँ विस्तारपूर्वक बताई गई हैं[1]। अनेक नाथपंथी सिद्धों के लिखे हुए रस-ग्रन्थ आज भी वैद्यों में प्रचलित हैं। चूरू नाथ-मठ के निर्माण में इनका बडा हाथ था। द्वारकानाथजी ने कई शिष्यों को नाथ पंथ में दीक्षित किया था।[2] श्री द्वारकानाथजी भानीनाथजी के साथ फतेहपुर (सीकर) में

---

१. नाथ सम्प्रदाय, पृष्ठ १७३-१७४।

२. चूरू आश्रम के महन्त देवीनाथजी तथा झुंझुनूं मठ के मठेश्वर ओमनाथजी ने उनके शिष्यों की नामावली इस प्रकार बताई- १. विशननाथ २. सोमनाथ ३. लादूनाथ, ४. बुधनाथ ५. देवीनाथ ६. प्रभनाथ ७. शीतननाथ ८. श्यामनाथ ९. किशननाथ १०. चाँदनाथ ११. गुलनाथ १२. चेतननाथ १३. उत्तमनाथ।
श्री द्वारकानाथजी के शिष्य तथा चूरू नाथाश्रम के वर्तमान महन्त श्री देवीनाथजी ने अपने शिष्यों के नाम इस प्रकार बताये-
१. देवनाथ २. निरजननाथ ३. गमनाथ ४. रतननाथ ५. निर्मलनाथ ६. चमननाथ ७. मदननाथ ८. दयारामनाथ ९. आत्मानाथ १०. पूर्णनाथ ११. रमेशनाथ १२. धर्मनाथ १३. वैराग्यनाथ १४. निर्मलनाथ १५. सुन्दरनाथ १६. इन्द्रनाथ।

वि० सं० १६७२ में नाथपंथ में दीक्षित हुए थे। श्री अमृतनाथजी महाराज की आज्ञा से उनके पट्ट शिष्य ज्योतिनाथजी ने इनकी चोटी काटी थी। वि० सं० १६८३ के फाल्गुन मास में श्री अमृतनाथजी का भण्डारा सम्पन्न होने के वाद ये भी ज्योतिनाथजी के साथ हिंगलाज देवी की यात्रा पर गये थे और फिर द्वारकापुरी की यात्रा करके लौटे थे।

द्वारकानाथजी के शिखर मन्दिर में उनकी संगमरमर की आदमकद खड़ी मूर्ति स्थापित है और शिखर मन्दिर के दरवाजे पर निम्नांकित पाठ उत्कीर्ण है-

"यह शिखर मन्दिर पूज्य श्री १००८ श्री ज्योतिनाथजी महाराज के शिष्य श्री द्वारकानाथजी महाराज के समाधि स्थल पर श्रीमान भगवानदास जी महावीरप्रसाद जेसनसरिया सरदारशहर निवासी ने वनवाया दिनांक ११.५.६६ जन्म आश्विन शुक्ला ११ सं० १६४८ ग्राम सातड़ा मे हुआ और निर्वाण मिती ज्येष्ठ कृष्णा ११ सं० २०४२ को चूरू में इसी स्थान पर हुआ।"

इनका भण्डारा मिती चैत्र वदि ६ वार सोमवार सं० २०४२ वि० (३१.३.८६) को हुआ जिसमें अनेक धूणियों के साधु सम्मिलित हुए।

## बाबा सोमनाथजी

वावा सोमनाथजी का जन्म ग्राम सुलखनिया[1] (सुलखणिया, तह० रतनगढ़, जि० चूरू) में वि० सं० १६७२ मे एक जाट परिवार में हुआ था।

---

१. सुलखनिया गॉव के ही लालगिर ने उन्नीसवीं शताब्दी ई० में अलखिया सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया था जिनकी वाणियां लोकगीतों में भी गाई जाती रही है। लालगिर वीकानेर में भी रहे और वहाँ उनके सम्प्रदाय के नाम अलख सागर कुआँ भी मौजूद है। उस कुएँ का निर्माण उस समय वीकानेर राज्य के दीवान लच्छीराम राखेचा ने करवाया था जो इनके अनुयायी वन गये थे। (चूरू म० शोध० इतिहास पृ० ४१०) नाथ-सम्प्रदाय में भी 'अलख पुरुष' की मान्यता है- "अलख पुरुष मेरी दिष्टि समाना"- (गोरखनाथ और उनका युग, पृ० १८०)।

इनके पिता का नाम गोमाराम तथा माता का नाम लक्ष्मी था। इनके दो संताने- एक पुत्र और दूसरी पुत्री हुई। पुत्री का देहान्त हो गया, पुत्र भेमाराम अभी मौजूद हैं जो सुलखनिया में निवास करते हैं। वि० सं० २००६ में इनको भानीनाथजी का सान्निध्य प्राप्त हुआ और कुछ समय बाद द्वारकानाथजी ने इनकी चोटी काटकर तथा चीरा चढ़ाकर इन्हें नाथ-पंथ में दीक्षित कर लिया और ये सोमनाथ नाम से जाने गये।[1]

कहा जाता है कि ग्राम देराजसर (तह० सरदारशहर) की वणी मे इन्होंने अन्न ग्रहण किये विना १२ वर्षो तक कठोर तपस्या की और वहाँ नाथ-मठ की स्थापना कर शिखर-मन्दिर बनवाया तथा उसमें अमृतनाथजी, किशननाथजी और भानीनाथजी की प्रस्तर मूर्तियाँ स्थापित कीं। मठ में दो बड़े कुण्ड भी बनवाये। सरदारशहर, सुलखनिया और रतनगढ़ मे भी इन्होंने नाथ मठों की स्थापना की। सरदारशहर का सोमनाथाश्रम सबसे बड़ा और पाँच शिखर मन्दिरो से युक्त है। सोमनाथजी ने यहाँ पीपल के अनेक वृक्ष लगाये और इसको हरा-भरा करने का प्रयत्न किया। ग्राम बुकनसर व भैरूंसर मे भी इन्होने पानी के लिए कुण्ड बनवाये थे।

सोमनाथजी ने अन्तिम समय तक साधनामय जीवन व्यतीत किया। मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी वि० सं० २०५५ को प्रातः ५.०० बजे, ८३ वर्ष की आयु में इन्होने शरीर त्याग दिया। इसी दिन अपराह्न ३.०० बजे इन्हे समाधि दी गई। सरदारशहर क्षेत्र में इनकी बड़ी मान्यता रही। इनके देहपात के दिन सरदारशहर का सारा बाजार इनके शोक में बन्द रहा। हजारों लोग इनकी समाधि के समय उपस्थित रहे। मिती पोह बदि ५ वि० सं० २०५५, दिनांक ७.१२.९८ को उनके द्वादशे पर लगभग २५० साधु और हजारों

---

१. दिनांक १८.४.९४ को जब मैने श्री गोविन्दजी अग्रवाल, शकरलालजी झखनाडिया और गिरधारीलाल सैनी फोटोग्राफर के साथ देराजसर वणी और सरदारशहर आश्रमों की यात्रा की तो ज्ञात हुआ कि सोमनाथजी अपना गुरु भानीनाथजी को ही मानते थे। सरदारशहर नाथाश्रम के एक शिखर मन्दिर के दरवाजे पर उन्होंने अपने को भानीनाथजी का शिष्य उत्कीर्ण करवाया है।

श्रद्धालु सेवक एकत्र हुए। उस दिन सरदारशहर और गांव सुलखनिया के घरों में लड्डुओं का प्रसाद वितरण किया गया। उसी दिन इनके शिष्य पशुपतिनाथजी को सरदारशहर नाथाश्रम का संचालक घोषित किया गया।[1]

## बाबा शंकरनाथजी

थान-मठोई आश्रम (राजगढ़ जि० चूरू) के मठेश्वर बाबा शंकरनाथजी का जन्म ग्राम सातड़ा (तह० चूरू) में चौधरी मोटाराम के पुत्र भींवाराम की पत्नी रामीदेवी की कोख से पौष शुक्ला १५ वि० सं० १९७३ को हुआ जो सांसारिक सम्बन्ध से श्री भानीनाथजी के भतीजे ही हैं। बचपन में बीमार हो जाने से अशक्त शारीरिक स्थिति के कारण वि० सं० १९८० के वैशाख मास में घरवालों ने फतेहपुर (सीकर) ले जाकर इन्हें वहाँ के नाथाश्रम की भेंट चढ़ा दिया। वहाँ नाथजी की कृपा से ये स्वस्थ हो गये। उस समय फतेहपुर नाथाश्रम के पीर महन्त ज्योतिनाथजी ने इनकी चोटी काटकर अपना शिष्य बना लिया और शंकरनाथ नाम देकर इन्हे नाथपंथ में दीक्षित कर लिया?[2]

शंकरनाथजी वि० सं० १९९९ में फतेहपुर से चूरू आ गये। वि० सं० २००० के लगभग जब नया नाथाश्रम बन गया और नाथ लोग अधिकतर उस आश्रम में रहने लगे तब शंकरनाथजी ने वि० सं० २००४

---

१. दैनिक भास्कर पत्र (सीकर संस्करण) दिनांक ७.१२.९८ के पृ० ६ पर 'सदी के विलक्षण अवधूत बाबा सोमनाथ' शीर्षक से इनका विस्तृत परिचय प्रकाशित हुआ है।

२. सातडा के फूलाराम चौधरी (न्योळ जाट) ने बताया कि शंकरनाथजी का बचपन का नाम किशनाराम था। इनके साथ सात साधुओं ने दीक्षा ली जिनके नाम हैं- शुभनाथ, घडीनाथ, मकडीनाथ, शोभानाथ, केशरनाथ, गणेशनाथ और रूपनाथ। ये शुभनाथजी ही ज्योतिनाथजी के उत्तराधिकारी बने थे। मकड़ीनाथजी वि० सं० २००४ में सातडा में आ गये थे और वि० स० २००५ में इन्होंने यहाँ नाथ मठ बनाया। शंकरनाथजी ने मठ के निकट वि० सं० २००८ में एक कुएँ का निर्माण करवाया। चूरू-रतनगढ रेल मार्ग पर अभी कुछ समय पूर्व 'श्री मकडीनाथ नगर' नाम का रेल्वे स्टेशन बना है जो इनके श्रद्धानुओं ने प्रयत्न करके बनवाया है।

में मन्त्रियों की छतरी की देखभाल का दायित्व संभाला और आज भी वे उसके संचालक हैं। वि० सं० २०११ में इन्होंने थान-मठोई नाथाश्रम की व्यवस्था भी संभाल ली, लेकिन चूरू व सातड़ा आदि में वरावर आते-जाते रहे। यह क्रम आज भी वना हुआ है।

शुभनाथजी के उत्तराधिकारी फतेहपुर नाथाश्रम के पीर हनुमाननाथजी के साथ इन्होंने केदारनाथ, गंगोत्री, यमुनोत्री, वद्रीनाथ-धाम, त्रियुगी-नारायण आदि उत्तराखण्ड तीर्थो की मंगलमय यात्राएँ की है।[1]

बाबा शंकरनाथजी में शिक्षा के प्रति लगाव और भौतिक निर्माण के प्रति रुचि सदैव से रही है। 'नाथ तीर्थावली' पुस्तक का इन्होने प्रकाशन भी करवाया है। विद्या-प्रेमी सम्पन्न लोगो के आर्थिक सहयोग से इन्होंने थान-मठोई और लादड़िया में प्राइमरी स्कूल, गाँव छोटी राघा (तह० राजगढ़, जि० चूरू) में मिडिल स्कूल तथा सातड़ा में श्री अमृतनाथ माध्यमिक विद्यालय के भवन बनवाये। सातड़ा का अमृतनाथ माध्यमिक विद्यालय अव क्रमोन्नत होकर सीनियर सैकण्डरी स्कूल हो गया है। इसके भवन का भी पर्याप्त विकास हुआ है। इन सबके पीछे बाबाजी का विशेष प्रयत्न रहा है। ८२ वर्षीय वावा शंकरनाथजी आज भी कर्मठता की प्रतिमूर्ति लगते हैं।

## साध्वी बरजी बाई

गाँव जासासर[2] (तह० चूरू) के नाथाश्रम में साध्वी बरजीवाई का समाधि मन्दिर है जिस पर शिखर बना हुआ है। मन्दिर मे उनकी समाधि

---

१. विलक्षण अवधूत, फतेहपुर सस्करण (वि० स० २०३५), पृ०- ३२०।

२. जासासर वीदावत ठाकुरों की ताजीमी जागीर गीरीसर (तह० रतनगढ) की भायप का गाँव रहा है। राव वीदा पूर्व वीकानेर राज्य के सस्थापक राव वीका के सहोदर लघु भ्राता थे जिनके नाम पर राठौडों की वीदावत शाखा चली। वीदावतों में शूरवीर योद्धाओं के अतिरिक्त साहित्य प्रेमी, कवि, ख्यातकार एव इतिहासकार आदि भी हुए

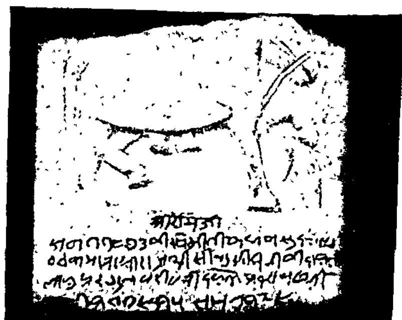
और मूर्ति है। बरजीबाई जासासर के सारण जाट खिराज की पुत्री थी और निकटवर्ती गाँव नाकरासर के राव जाटों में ब्याही थी। विवाह के बाद पति की असामयिक मृत्यु ने उन्हें दुःख सागर में धकेल दिया, लेकिन बरजीबाई ने संयम से काम लिया। यद्यपि जाटों में पुनर्विवाह या नाते को जातीय अनुमति प्राप्त थी तथापि उन्होंने पुनः इन सांसारिक झंझटों में पड़ना उचित नहीं समझा। उन्होंने नाथ पंथ की माननाथी शाखा में दीक्षा ग्रहण कर ली[1]

---

हैं और आज भी है। बीकानेर महाराजा सर गंगासिह के राज्यकाल (१८८७-१९४३ ई०) में २०० से अधिक गाँव इनकी जागीरों में थे। बीदासर मुख्य ठिकाना था जो राज्य के चार प्रमुख ठिकानों (सिरायतों) में था। सांडवा, गोपालपुरा, चाड़वास, मलसीसर, हरासर, लोहा, खूडी, कनवारी और शोभासर दोलड़ी ताजीम के ठिकाने थे। इसके अतिरिक्त इकोलडी ताजीम और सादी ताजीम के अनेक ठिकाने थे। सन् १९३१ की जनगणना के अनुसार बीकानेर राज्य में बीदावतों की संख्या ६६५९ थी। बीदासर और साडवा के जागीरदारों को राजा की उपाधि थी तथा अन्य कई जागीरदार भी उच्च पदों पर थे (विशेष जानकारी के लिए देखें- चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास, लेखक- गोविन्द अग्रवाल, पृ०-३२७-३३६)। सन् १९७१ ई० के भारत-पाक युद्ध में पाक सेनापति जनरल नियाजी से हथियार डलवाने में कुसुमदेसर के ले० जनरल श्री सगतसिह बीदावत की अहम भूमिका रही जिसके परिणामस्वरूप दुनिया के नक्शे से पूर्वी पाकिस्तान का नाम मिटकर नये बागला देश का आविर्भाव हुआ।

जासासर गाँव उपरोक्त गौरीसर के जागीरदार मानसिंह (जिनके नाम पर मानसिंहोत उपशाखा चली) के दो पुत्रों- वुधसिह एवं हठीसिंह को मिला था। वुधसिह उतरादे पाने (हिस्से) के तथा हटीसिह दिखणादे पाने के ठाकुर थे। बीकानेर राज्य के इतिहास से ज्ञात होता है कि वि० सं० १८७३ (ई० सन् १८१६) में बीकानेर राज्य पर मीरखाँ (पटान) की फौज का आक्रमण हुआ था जिसमें बीदावतों ने उसका एक हाथी और १५० घोड़े लूट लिए थे (बीकानेर राज्य का इतिहास, ले० गौ० ही० ओझा, पृ० ३६६)। जासासर से मिली शंभुसिह की खण्डित देवली के लेख से ज्ञात होता है कि (इस झगडे में उतरादे पाने के टाकुर) शंभुसिंह (वीरता पूर्वक लड़कर) मिती वैशाख सुदि ८ वि० सं० १८७३ को काम आये थे जिनकी छतरी और देवली (वुधसिह के पौत्र) गुलाव सिंह ने वि० सं० १८६० मिती वैशाख सुदि ५ को जासासर में स्थापित की थी। छतरी तो गिर चुकी है किन्तु उनकी खण्डित देवली मैं जासासर से ढूंढ-खोजकर लाया था जो मेरे चूरू निवास, बीदावत भवन में सुरक्षित रखी है, जिसका फोटो आगे दिया जा रहा है।

१. नाथ-पंथ में नारी-दीक्षा को बहुत पहले ही मान्यता मिल चुकी थी। आई पंथ की स्थापना तो भगवती विमला ने ही की थी (नाथ-संप्रदाय, लेखक डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ०-११)



जासासर से प्राप्त ठा० शंभुसिह की खण्डित देवली।

तथा निष्ठा एवं संयमपूर्वक आजीवन एक नाथ योगिनी के कर्त्तव्य का निर्वहन किया। उन्होंने कान नहीं चिरवाये थे और वे श्वेत वस्त्र धारण करती थीं। चूरू की लच्छीबाई ने तो कान चिरवाकर कुण्डल भी धारण किये थे।[1]

बरजीबाई सांसारिक पक्ष से श्री भानीनाथजी की सगी मौसी लगती थीं और भानीनाथजी उनसे मिलने के लिए यदा-कदा जासासर आया करते थे। वे अपने पीहर के पैतृक मकान में ही साध्वी-जीवन व्यतीत करती थीं। उनकी साधना, सात्विक जीवन पद्धति और परोपकारी स्वभाव से जासासर की जनता बड़ी प्रभावित थी। जासासर के वर्तमान चौधरी जोराराम सारण (७८) जो उनके संसार पक्षीय सगे भतीजे ही हैं, के अनुसार बरजी बाई ने ८५ वर्ष की आयु पाकर पोह बदि अमावस्या वि० सं० २००२ में शरीर छोड़ा था। उनकी समाधि के लिए वर्तमान स्थान भी श्री भानीनाथजी द्वारा बताया गया था और उन्हीं के कहने से उतरादे पाने के स्व० ठा० मलसिंहजी बीदावत ने १८।। बीघा जमीन बरजी बाई की समाधि के उपयोगार्थ छोड़ी थी। स्व० ठा० मलसिंहजी के पुत्र ठा० सवाईसिंह का कहना है कि समाधि के लिए छोड़ी गई जमीन के पक्के कागजात मकान की संभाल करने वाले द्वारकानाथजी के शिष्य चाँदनाथजी के नाम करवा दिए गये हैं। चाँदनाथजी ने जन सहयोग से यहाँ पानी का एक बड़ा कुण्ड भी बनवादिया है। इस नाथाश्रम में डूंगरनाथजी महाराज की समाधि और शिखर-मन्दिर भी है। चूरू नाथाश्रम के वर्तमान मठेश्वर देवीनाथजी के शिष्य रतननाथजी ने अब यहाँ मेघनाथजी (औघड़ जो इसी आश्रम में रहते थे) का समाधि मन्दिर तथा एक कुआं भी बनवा दिया है।

---

1. चूरू की लच्छीबाई ने भी नाथ पंथ में दीक्षा ली थी, लेकिन उन्होंने कान चिरवाकर कुण्डल धारण किये थे। वे भी सफेद वस्त्र धारण करती थीं। दीक्षा के बाद उनका नाम लच्छनाथ हो गया था। चूरू के श्री गोविन्दजी अग्रवाल (इतिहासकार) का कहना है कि उन्होंने बचपन में लच्छनाथ को खुद देखा है। वे उनकी दादीजी के पास कई बार आ जाया करती थीं और देर तक उनसे बातें किया करती थीं।

उतरादे पाने के वर्तमान ठा० भोपालसिंहजी बीदावत (७०) का कहना है कि गाँव के दक्षिण में जो पक्का जोहड़ा सेठ ठाकुरसीदास (अग्रवाल) के पुत्रों ने वि० सं० १९९९ में बनवाया था, उसकी नींव वि० सं० १९९५ के अकाल में भानीनाथजी के हाथों से ही रखी गई थी। यहाँ पहले सोनळ की डैरी नाम का ७१ बीघा खेत जो भानीनाथजी के कहने से दिखणादे पाने के तत्कालीन ठाकुर (सम्भवतः ठा० गणेशसिंहजी) ने जनहित के लिए पुण्यार्थ छोड़ दिया था और इसकी घोषणा अमृतनाथजी महाराज के भण्डारे के अवसर पर वि० सं० १९८३ में फतेहपुर (सीकर) में कर दी थी।[1]

## भण्डारा

भानीनाथजी का भण्डारा ज्येष्ठ शुक्ला १५, वार मंगलवार वि० सं० २०२८ तदनुसार ८ जून, १९७१ ई० को सम्पन्न हुआ। चूरू के श्री नाथआश्रम में इस भण्डारे का तीन दिवसीय मेला दिनांक ६, ७, ८ जून, १९७१ को लगा। मेले में बत्तीसों धूणियों[2] के महन्त तथा नाथ-योगी आमन्त्रित थे। श्री सुबोधकुमार जी अग्रवाल से प्राप्त विवरण के अनुसार इन साधुओं में मन्नाथियों के अतिरिक्त अन्य नाथपंथी यथा आईपंथी, रामनाथी, सतनाथी, धर्मनाथी योगियों के अलावा दशनामी सम्प्रदाय व कबीरपंथी आदि के लगभग ७०० साधु एकत्र हुए। साधुओं के अलावा हजारों श्रद्धालु भी मेले में सम्मिलित हुए। तीन दिनों तक चूरू का नाथाश्रम साधुओं और श्रद्धालुओं से भरा रहा। ८ जून मेले का प्रमुख दिवस था।

---

१. श्री विलक्षण अवधूत, ले० दुर्गाप्रसाद त्रिवेदी, प्रकाशक-पीर (महन्त) ज्योतिनाथजी, फतेहपुर (सीकर) वर्ष वि० सं० २००६, पृ० ११५। आगे यह भी लिखा है कि ऊदासर के ठा० चिमनसिंह (बीदावत) ने भी ५१ बीघा जमीन आश्रम को भेंट की थी।

२. ३२ धूणियों के मेले को 'भण्डारा' तथा १६ धूणियों के मेले को 'रोटड़ा' कहते हैं।

'लोक संस्कृति शोध संस्थान, नगर-श्री, चूरू' के वर्तमान अध्यक्ष श्री सुबोधकुमार जी अग्रवाल ने मेले (भण्डारे) के तीनों दिन नाथाश्रम में उपस्थित रहकर आगन्तुक नाथ योगियों का दर्शन-लाभ लिया तथा उनमें से कइयों से साक्षात्कार कर विभिन्न विषयों की जानकारियां भी प्राप्त कीं। उन्होंने उस समय जो विवरण तैयार किया उसकी मूल हस्तप्रति मुझे उपलब्ध कराई जिसमें मेले में सम्मिलित होने वाले प्रमुख साधु, पीर, महन्तों के नाम लिखे हुए हैं जिसका विवरण इस प्रकार है-

नोहर अखाड़े के महन्त छोटूनाथजी, जहरपुरपाली से चन्दगीनाथजी, बुवाणी खेड़ा (जि० हिसार) से प्रयागनाथजी, अखाड़ा सुलतानपुर के महन्त वीरनाथजी, अखाड़ा देमुकलान से कलाईनाथजी, सुरतानाथजी और मेवानाथजी, अबोहर के श्रेयोनाथजी व मूलनाथजी, खानपुर कलां (जि० रोहतक) से महन्त निहालनाथजी, टीला गोरखपुर, गोरखमंडी (जि० जूनागढ़) के महन्त शंकरनाथजी शास्त्री, कोथ अखाड़ा (जि० जींद) के महामंत्री धर्माईनाथजी, फतेहपुर (सीकर) के रविनाथजी, सिंधनवां अखाड़े के लिछमणनाथजी, देरासर बणी (जि० चूरू) के मठ-निर्माता सोमनाथजी, थानमठोई आश्रम (जि० चूरू) के मठेश्वर बाबा शंकरनाथजी, झांसल अखाड़े के सेवागिर, हिम्मतगिर व कल्याणगिरजी, नारनोल अखाड़े के पोकरदास जी आदि आदि।

भण्डारे के मुख्य दिवस थान की मांग के लिए सभी मन्नाथी पीरों ने भानीनाथजी की समाधि पर धूपिया किया और बाद में चीनी से भरी परात से सबको प्रसाद बांटा गया। 'पंख'[1] ने सभी धूणियों के महन्तों को उनके तम्बुओं में जा-जाकर पंचायत के लिए सूचना दी। इसके बाद पंचायत हुई।

---

१. सूचना देने वाला चोबदार जो गृहस्थ होता है। पंख के रूप में सूचना देते समय उसके हाथ में चांदी की छड़ी, गले में पट्टा लगा रहता है जो पंख की पहिचान मानी जाती है।

अगुवाई करते हुए बुवाणी खेड़े के पीर महन्त प्रयागनाथजी ने नागफणी (एक वाद्य) बजाई और इस संकेत को समझकर सभी साधुओं ने पंगत में बैठकर भोजन किया।

उस दिन (८ जून, १६७१) सायं ५.३० बजे आगन्तुक साधु-समाज फिर एकत्र हुआ। श्रद्धालु भी हजारों की संख्या में थे। द्वारकानाथजी के शिष्य शीतलनाथजी को चादर उढ़ाई गई। चादर उढ़ाते ही उपस्थित समुदाय से जय-जयकार की ध्वनि गूँज उठी। उधर एक तरफ भण्डारे में उपस्थित हुए साधुओं को चीपी[1] देकर विदा किया जाता रहा और दूसरी ओर श्रद्धालुओं की ओर से भेंट चढ़ाने का कार्यक्रम शुरु हुआ जो रात्रि के आठ बजे तक अनवरत चलता रहा।[2]



१. भण्डारे के बाद आगन्तुक साधुओं को जो नकद राशि विदाई के समय दी जाती है उसे चीपी कहते हैं।
२. सुबोध कुमारजी अग्रवाल का अनुमान है कि श्रद्धालुओं द्वारा भेंट की गई नकद राशि लगभग २०-२२ हजार रुपयों से कम नहीं होगी।

# सन्दर्भ सूची

१. गीता-प्रवचन, विनोबा, अनुवादक हरिभाऊ उपाध्याय, सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, छियालिसवां संस्करण, नवम्बर, १९९५।

२. गोरख दर्शन, ले० अक्षय कुमार बनर्जी, सम्पादक- डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, प्रकाशक- महन्त अवेद्यनाथ, दिग्विजयनाथ न्यास, गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष- द्वितीय संस्करण सन् १९८८ ई०।

३. गोरखनाथ और उनका युग (आगरा विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच० डी० की उपाधि के लिए स्वीकृत शोध प्रबन्ध), डॉ० रांगेय राघव, प्रकाशक- आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-६, वर्ष १९६३।

४. घरबीती-परबीती (संस्मरण), लेखक रावतमल पारख, प्रकाशक- मरुधरा प्रकाशन, चूरू, वर्ष- १९९३ ई०।

५. चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास, लेखक- गोविन्द अग्रवाल, प्रकाशक- लोक संस्कृति शोध संस्थान, नगर-श्री, चूरू (राज०) वर्ष- वि.सं. २०३१ (सन् १९७४ ई०)।

६. नगर-श्री, चूरू से प्रकाशित शोध त्रैमासिकी 'मरु-श्री' के विभिन्न अंक (सम्पादक-गोविन्द अग्रवाल)।

७. नाथ-संप्रदाय, लेखक- डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, प्रकाशक- हिन्दुस्तानी एकेडेमी, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद, प्रकाशन वर्ष-१९५० ई०।

८. पत्रों के प्रकाश में- स्वामी गोपालदास जी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व, लेखक- गोविन्द अग्रवाल, प्रकाशक- नगर-श्री, चूरू (राज०) प्रकाशन वर्ष- वि.सं. २०२५।

९. परमहंस परिव्राजकाचार्य स्वामी श्री १०८ अमृतनाथजी (संक्षिप्त जीवन चरित्र) प्रकाशक- कनीराम कोठ्यारी, चूरू, प्रकाशन वर्ष- वि.सं. १९८४।

१०. बीकानेर राज्य का इतिहास (दूसरा भाग), लेखक- डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, प्रकाशक- बाबू चांदमल चंडक, मुद्रक- वैदिक यंत्रालय, अजमेर, प्रकाशन वर्ष- वि.सं. १९९७ (१९४० ई०)।

११. भर्तृहरिशतकम् (त्रय) भाषा टीका समेतम्, पुरोहित गोपीनाथ, मुद्रक- खेमराज श्री कृष्णदास, श्री 'वेंकटेश्वर' यंत्रालय, बम्बई, प्रकाशन वर्ष- सन् १९९६ ई०।

१२. भानीनाथजी का भण्डारा (हस्तलिखित प्रति) श्री सुबोधकुमार अग्रवाल, लोक संस्कृति शोध संस्थान, नगर-श्री चूरू (राज०)।
१३. भारतीय संस्कृति कोश, लेखक- लीलाधर शर्मा, 'पर्वतीय', राजपाल एण्ड संज, मदरसा रोड़, कश्मीरी गेट, दिल्ली, प्रका० वर्ष-१९९५ ई०।
१४. मरुभारती, शोध त्रैमासिकी, पिलानी, अप्रेल, १९९९।
१५. मरौ हे जोगी मरौ, आचार्य रजनीश के प्रवचन (१९७८)।
१६. महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति-ग्रन्थ, प्र० सम्पादक डॉ० भगवतीप्रसादसिंह, प्रकाशक- श्री महन्त अवेद्यनाथ; महन्त दिग्विजयनाथ ट्रस्ट, गोरखपुर मन्दिर, गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष- सं० २०२९ वि० (सन् १९७२ ई०)।
१७. महाभारथ इतिहास सार, (हस्तलिखित प्रति) प्रतिलिपि-काल वि.सं. १९१९।
१८. योगवाणी, जनवरी, १९७७, 'गोरख' विशेषांक, प्रकाशक- गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष- वि.सं. २०३३।
१९. योगवाणी, जनवरी १९८४, 'नाथसिद्ध चरित' विशेषांक, प्रकाशक- गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर, प्रकाशन वर्ष- वि.सं. २०४०।
२०. श्रीनाथ तीर्थावली, प्रकाशक- योगी शंकरनाथ, चूरू (राजस्थान), प्रकाशन वर्ष- वि.सं.० २००७।
२१. श्री विलक्षण अवधूत, लेखक- दुर्गाप्रदसाद त्रिवेदी "शंकर" (शंकरानन्द) प्रकाशक- श्री पीर (महन्त) ज्योतिनाथजी, फतेहपुर (राज०) प्रकाशन वर्ष- वि.सं. २००६।
२२. श्री विलक्षण अवधूत परमहंस श्री अमृतनाथजी महाराज, लेखक दुर्गाप्रसाद त्रिवेदी "शंकर", प्रकाशक- महन्त श्री हनुमाननाथजी, श्री अमृताश्रम फतेहपुर (सीकर) राज०, प्रकाशन वर्ष- वि.सं. २०३१।
२३. सरण मछंदर गोरख बोले, सम्पादक- मदनलाल शर्मा प्रकाशक- श्रद्धा प्रकाशन, वैद्यजी का नोहरा, पिलानी (राज०) वर्ष- १९८४ ई०।
२४. सहजयोगी संत श्री श्रद्धानाथजी महाराज, ले० पीठाधीश्वर बैजनाथ, प्रकाशक- श्री नाथजी महाराज का आश्रम (ट्रस्ट), लक्ष्मणगढ़ (सीकर) राजस्थान, प्रकाशन वर्ष- १९९३ ई०।
२५. सहजयोगी सन्त श्री श्रद्धानाथजी महाराज- साधना और विचार, लेखक- पीठाधीश्वर बैजनाथ, प्रकाशक- श्रीनाथजी महाराज का आश्रम (ट्रस्ट), लक्ष्मणगढ़ (सीकर), प्रकाशन वर्ष- १९९६ ई०।





गस्त 1917, विरानीपट्टी, कटघरापट्टी, सुल्तानपुर, उ० प्र० ।
, ए० तथा एम० ए० (पूर्वार्द्ध) अंग्रेजी साहित्य में ।
त, जनवार्ता ,समाज, प्रदीप, चित्ररेखा, हंस और कहानी आदि
त्रिकाओं और समाचार पत्रों का सह-सम्पादन कर चुके हैं ।
52-53 में गणेशराय नेशनल इण्टर कालेज जौनपुर में अंग्रेजी के
क्षा ।
70-72 के दौरान विदेशी छात्रों को हिन्दी, संस्कृत और उर्दू की
ना ।
वर्ष उर्दू विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय की द्वैभाषिक कोश
र्दू-हिन्दी) परियोजना में कार्य ।
ध्यक्ष, मुक्तिबोध पीठ, सागर विश्वविद्यालय, सागर (म० प्र०) ।
तियाँ *धरती (कविता संग्रह 1945, दूसरा संस्करण 1977)*
गुलाब और बुलबुल (गजलें और रुबाइयाँ 1956)
दिगन्त (सॉनेट 1957)
ताप के ताए हुए दिन (कविता संग्रह . 1980)
शब्द (कविता संग्रह . 1980)
उस जनपद का कवि हूँ (कविता संग्रह 1981)
अरघान (कविता संग्रह . 1984)

0, गोरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003